वर्षा आधारित खेती की उन्नत तकनीक

झारखण्ड राज्य की स्थापना 15 नवम्बर 2000 में हुई। यह 22 जिलों में 79.70 लाख हेक्टेयर भूमि में फैला हुआ है। इस राज्य में सिंचाई की सुविधा खरीफ में 12 प्रतिशत, रबी में 8 प्रतिशत और गरमी में 1 प्रतिशत है। इस राज्य में सिंचाई की सुविधा केवल 20 प्रतिशत तक ही बढ़ाई जा सकती है। इससे अधिक होने की संभावना बहुत कम है, चूंकि यहाँ सालों भर बहने वाली नदियों की कमी है और जमीन के नीचे पहाड़ है। इस क्षेत्र में वर्षा तो करीब-करीब 1400-1550 मि.मी. तक होती है मगर इसकी अवधि केवल साढे तीन या चार माह का होता है (15 जून से अक्तूबर के दूसरे सप्ताह तक)। वर्षा की तीव्रता अधिक होने से भू-क्षरण की समस्या बराबर बनी रहती है। इसके विपरित वर्षा ऋतु खत्म होने पर नवम्बर और दिसम्बर में सुखाड़ रहता है यानी वर्षा नहीं होती है। जिससे वर्षा पर आधारित रबी फसलों को सुखाड़ का सामना करना पड़ता है।

झारखंड की 27 प्रतिशत भूमि में जंगल अवस्थित है और 30-32 प्रतिशत में खेती होती है। यह पूरा राज्य पठारी है और इसकी ऊँचाई समुद्र तट से 1400-1200 मीटर है। यहाँ के अधिकतर किसान छोटे और सीमांत है।

अंगीकृत की जाने वाली उन्नत तकनीक :

शुष्क भूमि अनुसंधान का कार्य इस क्षेत्र में 1971 से भारतीय कृषि अनुसंधान, नई दिल्ली की मदद से आरंभ हुआ और अभी भी इसपर कार्य चल रहा है। शुष्क भूमि के शोध कार्य की अनुशंसाएं इस राज्य के लिए बहुत लाभदायक है और किसान इसे अपना रहे हैं। चूंकि 80-90 प्रतिशत क्षेत्र शुष्क भूमि पर ही आधारित है, और भविष्य में भी रहेगा, इसलिए अधिक सिंचाई की सम्भावना नहीं है। झारखण्ड राज्य की भूमि के बनावट के आधार पर तीन प्रकार में बाँटा गया है, 1. ऊपरी जमीन (टांड़), 2. मध्यम जमान (बीच वाला) और 3. नीचे वाली जमीन जिसे दौन कहते हैं। तीनों जमीनों की बनावट एक दूसरे से भिन्न है और जिनके वर्षा पर आधारित खेती के सिद्धान्त इस प्रकार हैं -

(क) मिट्टी तथा जल संरक्षण के उपाय किए जाए: इसके लिए छोटे-छोटे तालाब बनाकर वर्षा के पानी को जमा किया जा सकता है और सुखाड़ के दिनों में इसे सिंचाई के काम में लाया जा सकता है। इससे मिट्टी का क्षरण रुकता है और भूमि की उर्वरता तथा जल-धारण की क्षमता बढ़ती है।

(ख) ऊपरी जमीन की आम्लियता दूर करना: मिट्टी की उत्पादकता में वृद्धि लाने के लिए आम्लियता दूर करना होगा। खासकर दलहनी फसलों की

बोआई के पहले खेतों में चूना का प्रयोग और जीवाणु खाद से बीजों को उपचारित करना बहुत लाभदायक है।

(ग) फसलों एवं किस्मों का चुनाव: फसलों तथा किस्मों का चुनाव बहुत महत्त्व रखता है, जैसे ऊँची टांड़ जमीन में धान की अपेक्षा, ज्वार, मडुआ, मूंगफली, मकई, सोयाबीन आदि की फसलें लें। कुछ निचली तथा भारी टाँड़ जमीन जिसकी जल-धारण क्षमता थोड़ी अधिक है, उन्नत गोरा, बी. आर. 23-19 या और कोई दूसरी किस्म जो 90 दिनों में तैयार होती हो को लेना चाहिए, इससे सुखाड़ पड़ने पर भी पैदावार में कोई कमी नहीं होगी।

अधिक जल-धारण कर सकने वाली जमीनों में खरीफ के बाद रबी में आगात बोआई करके तीसी, कुसुम, चना, जौ, मसूर आदि फसल भी ली जा सकती है। उसी प्रकार अधिक उपज देने वाली तथा कम दिनों में तैयार होनी किस्मों का चुनाव करना चाहिए। जल्दी पकने वाले प्रभेदों को लगाने से मिट्टी में नमी रहते हुए रबी फसल लगाना अधिक लाभप्रद होगा।

(घ) फसलों की आगात बोआई: यह तकनीक असंचित खेती के लिए बहुत महत्त्व रखता है। वर्षा की शुरुआत देर से होने पर धान और मूंगफली की सुखी बोआई भी की जा सकती है। इस प्राकर रबी की खेती में भी कोशिश यह रहे कि अक्तूबर के अंत तक मिट्टी की नमी के अनुसार बोआई कर लें। सबसे पहले चना और तोरी और इसके बाद तीसी और कुसुम तथा आखिर में जौ मसूर की बोआई करनी चाहिए।

(ङ) पौधों की पर्याप्त संख्या: शुष्क भूमि में पौधों की पर्याप्त संख्या बहुत आवश्यक है। इसके बिना उपज में कमी और अधिक होने का खतरा लगा रहता है। खरीफ में छिछली तथा रबी में गहरी बोआई करनी चाहिए।

(च) अनुसंशित उर्वरक का प्रयोग: असंचित खेती में मिट्टी में उर्वक का प्रयोग बहुत महत्व रखता है। मिट्टी तथा फसल के अनुसार उर्वरक का व्यवहार होना चाहिए। उर्वरकों को पंक्तियों में और गहराई पर फसल बोने के समय ही डालें।

(छ) खर-पतवार नियंत्रण : खेतों को खर-पतवार से हमेशा मुक्त रखें क्योंकि फसलों को उपलब्ध होने वाली जल एवं पोषक तत्त्वों को खर-पतवार ले लेते हैं और फसलों को उनकी उपलब्धी कम होती है, जिससे पैदावार कम हो जाता है।

(ज) पंक्तियों में बोआई करना : उन्नत खेती के लिए पंक्तियों में बोआई करना आवश्यक है। खरीफ मौसम में इस क्षेत्र में खेतों में बहुत खर-पतवार होता है। जिनको खुरपी द्वारा निकाला जाता है। पंक्तियों में लगाने पर पंक्तियों को कोड़ दें। उससे करीब 60-70 प्रतिशत खर-पतवार का नियंत्रण हो जाता है।

भूमि के बनावट के अनुसार अंगीकृत उन्नत तकनीक

ऊपरी जमीन : टाँड़ जमीन को हम दो प्रकार में बाँट सकते हैं (1) मिट्टी का गहराई 20-50 सेमी. तथा (2) मिट्टी की गहराई एक मीटर या अधिक। जहाँ मिट्टी की गहराई कम है, तो वहां -

क) जंगल के पौधे, सागवान, शीशम, सखुआ तथा गमहार को लगाना चाहिए जो कमान बनाने तथा दूसरे कामों में आता है।

ख) इस जमीन का प्रयोग फलदार वृक्ष लगाने के काम भी आ सकती है। जैसे आम, शरीफा, ऑवला, लीची, पपीता तथा अमरूद इत्यादि।

ग) इस प्रकार के जमीनों में उन्नत किस्म के घास इत्यादि लगाना उचित होगा। इससे भू-क्षरण की समस्य कम होगी तथा जानवरों को चारा भी मिलेगा।

ऊपरी जमीन जहाँ गहराई 80 सेमी. से अधिक हो

इस प्रकार की जमीन में 90-95 दिनों की फसलों को लगाना चाहिए, जैसे - मकई, ज्वार, दलहनी, मूंगफली, धान, मडुआ इत्यादि को पूर्ण सस्य विधि से लगायें। ऐसी जमीन में जैविक खाद, नेत्रजन, स्फुर, तथा सूक्ष्म पोषक तत्त्व की कमी है।

अन्तराल खेती : ऊपरी जमीन में अंतराल खेती की अनुशंसा की गई है। जिससे किसानों को फसल की अच्छी उपज मिलती है और आमदनी अधिक होती है। कभी-कभी सुखाड़ की हालत में एक फसल नष्ट हो जाती है तो दूसरी फसल हो जाती है। ऊपरी जमीन में मुख्य अन्तराल खेती जो अनुशंसा की गई तथा किसानों द्वारा अपनाया जा रहा है, वह इस प्रकार हैं -

अरहर + मकई	(1:1 पंक्ति)	अरहर + धान	(1:2 पंक्ति)
अरहर + मूंगफली	(1:4 पंक्ति)	अरहर + उरद/मूंग	(1:2 पंक्ति)
अरहर + सोयाबीन	(1:2 पंक्ति)		

अरहर + मूंगफली में, मूंगफली की पंक्तियों की दूरी 90-120 से.मी. तथा बाकी सभी अंतराल खेती में अरहर से अरहर के पंक्तियों की दूरी 75 सेमी. रखना चाहिए।

ऊपरी जमीन में दिये फसल में बदलाव नीचे तालिका के अनुसार करना चाहिए।

फसल बदलाव का सस्य पैकेज

फसल	किस्म	दूरी (से.मी.)	बीज दर	खाद की मात्रा एन.पी.के. (कि./हे.)	बीज उपचार
धान	ब्राउन गोरा 23-19 बिरसा धान -101, बंदना	20 x पंक्ति	100	40:30:20	कैप्टन/थीरम के.पी 3 कि.ग्रा.
मक्का	शंकर, गंगा सफेद-2 स्वान-1, बिरसा मक्का-1	60 x 20	18	100:60:40	,,
मूंगफली	बिरसा बोल्ड, बी.जी. - 2 ए.के. 12-24	30 x 10	125	20:40:30	सात दिन पहले बीज को जीवाणु खाद से उपचार एवं उसके बाद थीरम/ कैप्टन 3 ग्राम/के.जी.
अरहर	बी.आर. 65 उपासा 120, आइ.सी.पी.एल 15 एवं बिरसा राहड़	60 x 25	18	20:40:30	,,
उरद	टी-9, पी.यू. 30	30 x 15	20	20:40:20	,,
मूंग	सुनैना, के-851	30 x 10	25	20:40:20	,,
तिल	कांके उजाला	20 x 10	5	30:20:20	थीरम/कैप्टन 2.3 ग्रा./किलो
मडुआ	ए. 404, बिरसा मडुआ	25 x पंक्ति	8	40:30:20	,,
रोपाई	ए. 404, बिरसा मडुआ	15-10 सेमी.	6	40:30:20	,,

बीच वाली जमीन : इस जमीन की जल धारण की क्षमता अधिक रहती है और ऐसे खेतों में जुलाई से जल का जमाव शुरु हो जाता है। इसमें मध्यम अवधि का धान 120-130 दिनों में तैयार होने वाला (आई.आर. 36 एवं 64, बिरसा 202) की रोपाई या बोआई करना चाहिए। धान को अक्तूबर में तुरन्त काट कर इसमें चना/मसूर/तोरी/तीसी तथा जौ की बोआई करें।

नीचे वाली जमीन : इस प्रकार की जमीन में पानी का जमाव जुलाई के आखिरी सप्ताह में लग जाता है। इसलिए ऐसे खेतों में लम्बी अवधि की धान लगानी चाहिए और धान काटकर टमाटर या गरमा सब्जी लगानी चाहिए।

उन्नत तकनीक को अंगीकृत करने से लाभ : उन्नत तकनीक अपनाने से किसानों के खतों में फसलों की उपज दोगुनी से तीगुनी बढ़ सकती है और इससे किसानों की आय बढ़ाने में मदद मिलती है।

अंगीकरण में समस्याएँ :

(क) ऊपरी जमीन आम्लीय है। (ख) यहाँ की ऊपरी जमीन में भू-क्षरण के कारण उपजाऊ ऊपरी परत बह जाती है। (ग) जमीन में कम जलधारक शक्ति। (घ) यहाँ वर्षा का वितरण बराबर नहीं है और कभी-कभी समय पर

नहीं होती। (ङ) यहाँ परम्परागत खेती है। लोगों को फसल बदलाव की तकनीक नहीं मालूम है। (च) किसानों की हालत ठीक नहीं है। छोटे और सीमांत किसानों को ऋण दिलाने की सुविधा कराना चाहिए। (छ) अच्छे बीज तथा खाद्य का अभाव है और सरकार द्वारा समय पर बीज तथा खाद का प्रबंध करना चाहिए एवं (ज) किसानों के खेत में अच्छे तकनीक का प्रदर्शन करना चाहिए।

लाभ-मूल्य विश्लेषण : राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी योजना और शुष्क भूमि कृषि अनुसंधान के अन्तर्गत किसान के खेतों पर 3 वर्षों के अनुसंधान के बाद निम्नलिखित परिणाम ऊपरी जमीन के फसल प्रणाली के अनुकुल पाया गया है। जो निम्न है :

फसल	कुल लागत रु./हे.	कुल लाभ रु./हे.	लाभ लागत अनुपात
धान (बिरसा गोड़ा)	5,910	3,805	0.64
मक्का (कंचन)	10,240	19,510	1.90
मूंगफली (ए.के. 12-24)	8,840	15,960	1.80
धान+अरहर (3:1)	10,060	9,515	0.94
अरहर+मूंगफली (1:2)	12,060	18,205	1.50

प्रमुख अनुशंसाएँ :

क) फसल के उपज में बढ़ोतरी तथा स्थिरता लाना।

ख) खेती की सघनता बढ़ाना।

ग) प्राकृतिक संसाधनों का विकास तथा उनका समुचित उपयोग और पैदावार बढ़ाना।

घ) जमीन के अनुरूप पौधों, फसलों तथा किस्मों का चुनाव होना चाहिए।

ङ) वर्षा के अनुरूप फसल पद्धति तथा किस्मों का चुनाव करना चाहिए।

च) उचित प्रभेदों का चुनाव।

छ) फसलों की आगात बोआई तथा पौधों की पर्याप्त संख्या तथा ऊपरी जमीन के फसल का बदलाव।

ज) खेती योग्य जमीन में नमी संरक्षण के उपाय करना बहुत आवश्यक है।

झ) समय से खर-पतवार का नियंत्रण।

ञ) ऊपरी जमीन में अंतराल खेती और मध्यम जमीन/नीचे वाली जमीन में दोहरी फसल पद्धति।

ट) फसलों में खासकर खरीफ की फसलों में जैविक खाद तथा उर्वरक का प्रयोग करें। जिससे उपज में काफी वृद्धि होती है। खरीफ में नमी रहती है। इसलिए पौधे उर्वरक का प्रयोग अधिक करते हैं।

अधिक उत्पादन हेतु उन्नतशील फसल प्रभेद

झारखण्ड राज्य में अनुसूचित जनजातियाँ, अनुसूचित जातियाँ और पिछड़े वर्ग की जनसंख्या कुल आबादी का 60 प्रतिशत है, जिनकी आर्थिक समृद्धि कृषि पर आधारित है। राज्य में कुल कृषि योग्य भूमि 80 लाख हेक्टेयर है जो कि यहाँ पर रहने वाले कुल जनसंख्या को खाद्यान्न उपलब्ध कराने के लिए काफी नहीं है। पठारी भूभाग, वर्षा आश्रित परम्परागत खेती कृषि को जीवन यापन साधन ही उपलब्ध करा सकती है, लेकिन आदिवासी कृषकों को उबारने के लिए यह अधिक नहीं है। झारखण्ड राज्य की कुल कृषि भूमि मुख्यतः तीन वर्गों में विभाजित है। इनमें मुख्यतः टाँड़, मध्यम जमीन तथा नीची जमीन है। टाँड़ जमीन में किसान मुख्यतः वर्षा पर आधारित कृषि कार्य करते हैं तथा इस जमीन की उपज क्षमता भी बहुत कम होती है। जहाँ पर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है वहाँ पर किसान मध्यम तथा नीची जमीन में खेती करते हैं तथा इसकी उपज क्षमता टाँड़ जमीन के मुकाबले अधिक होती है। झारखण्ड में फसल सघनता 110 प्रतिशत है, अर्थात यहाँ रबी में बहुत कम खेती का कार्य किया जाता है। ज्यादातर यहाँ खरीफ में धान, रागी, मक्का, उड़द, मूंग, अरहर, कुल्थी, मूंगफली, सरगुजा इत्यादि का उत्पादन किया जाता है, जबकि रबी में गेंहूँ, चना, सरसों, तीसी, मसूर इत्यादि का उत्पादन किया जाता है। इसलिए उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए हमें विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेदों का उपयोग करना होगा, ताकि सीमित संसाधनों में भी हम अधिक से अधिक उत्पादन प्रति हेक्टेयर प्राप्त कर सकें। बिरसा कृषि विश्वविद्यालय ने इस ओर कदम उठाते हुए विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेद विकसित किए हैं जिनको लगाने से न केवल गरीब किसानों की आर्थिक व्यवस्था सुदृढ़ होगी, बल्कि खाद्यान्न उत्पादन के मामले में भी हम आत्मनिर्भर हो सकेंगे। खरीफ तथा रबी में लगने वाले विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेदों के बारे में हम आगे विस्तृत रूप से चर्चा करेंगे।

खरीफ

खरीफ में यहाँ लगने वाले मुख्य फसल धान, रागी, मक्का, उड़द, मूंग, अरहर तथा कुल्थी है। अब बारी-बारी से प्रत्येक फसल के उन्नतशील प्रभेद की जानकारी लेंगे।

धान :

झारखण्ड राज्य की मुख्य फसल धान है। झारखण्ड के कुल 77 लाख हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि में से 18.2 लाख हेक्टेयर में धान की खेती की जाती है। इसमें से टाँड़ जमीन 7.29 लाख हेक्टेयर, मध्यम जमीन (दोन-3 और दोन-2) 6.29 लाख

हेक्टेयर और नीची जमीन (दोन-1) 4.81 लाख हेक्टेयर है। टाँड़ जमीन में जो कुल धान के क्षेत्रफल का लगभग 39 प्रतिशत है इसमें कम अवधि वाली प्रजातियों की खेती की जाती है। इसलिए हमें चाहिए कि काफी सोच-समझकर धान के उन्नतशील प्रभेद का चुनाव करें ताकि हमें अधिक से अधिक उत्पादन प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो सके।

ऊँची जमीन (टाँड़) : ऊँची जमीन में धान के वैसे प्रभेद का चुनाव करना चाहिए जो 80-95 दिन में पक कर तैयार हो जाए। टाँड़ में सिंचाई की सुविधा नहीं होती है और ज्यादातर वर्षा आधारित खेती ही की जाती है। इनमें से कुछ उन्नतशील प्रभेद इस प्रकार हैं :

किस्म	तैयार होने की अवधि (दिन)	उपज क्षमता (कि./हे.)
बिरसा धान 101	80-85	25-30
बिरसा गोड़ा 102	95-100	20-25
बिरसा धान 103	95-100	35-40
बिरसा धान 104	90-95	30-35
बिरसा धान 105	90-95	30-35
बिरसा धान 106	90-95	30-35
बिरसा धान 107	90-95	30-35
बिरसा धान 108	70-75	25-30
बिरसा विकास धान 109	85-90	30-35
बिरसा विकास धान 110	90-95	30-35
बिरसा धान।।।	85-90	25-30
बन्दना	90-95	30-35
कलिंगा -।।।	85-90	25-30
नरेन्द्र - 97	95-100	35-90

मध्यम जमीन (दोन-3 एवं दोन-2): मध्यम जमीन के खेतों में पानी कुछ दिन तक रहता है। यहाँ पर आवश्यकतानुसार सिंचाई की भी व्यवस्था रहती है, इसलिए इस जमीन में वैसे प्रभेद लगाना चाहिए जो लगभग 120-135 दिन में पक कर तैयार हो जाए। इनमें निम्नलिखित मुख्य प्रभेद हैं :

किस्म	तैयार होने की अवधि (दिन)	उपज क्षमता (कि./हे.)
आई.आर - 36	120-125	40-45
बिरसा धान 201	115-120	30-35
राजेन्द्र धान 202	130-135	40-45
आई.आर. - 64	120-125	40-45
बिरसा धान 202	120-125	35-40
सीता	130-140	45-45
कनक	130-140	55-60
बी.आर. - 9	145-150	30-35
बी.आर. - 10	145-150	30-35
पूसा बासमती	120-125	35-40
बासमती	130-135	30-35
बिरसामति	130-135	35-40
पी.एस.बी. -71	130-135	65-70
के.एच.आर. - 2	125-130	50-60

नीचे जमीन (दोन-2) : नीची जमीन में पानी की कोई समस्या नहीं होती है। इसलिए इसमें वैसे प्रभेद का चुनाव करना चाहिए जो लगभग 140-150 दिन में पक कर तैयार हो जाए। इसमें प्रमुख प्रभेद इस प्रकार हैं :

किस्म	तैयार होने की अवधि (दिन)	उपज क्षमता (कि./हे.)
राजश्री	140-150	50-55
एम.टी.यू - 7029	150-155	60-65
बी.पी.टी. - 5204	145-150	55-60
आई.ई.टी. - 5656	140-145	45-50
तुलसी	145-150	30-35
पूसा - 44	130-140	55-60

रागी (मडुँआ) :

धान के बाद राज्य में अधिक लगाई जाने वाली दूसरी फसल 'रागी' है जिसे लोग 'मडुँआ' के नाम से भी पुकारते हैं। इसकी खेती टाँड़ जमीन पर की जाती है।

सूखा पड़ने पर भी रागी कुछ-न-कुछ उपज दे जाती है। जबकि टाँड़ जमीन पर लगाई जाने वाली दूसरी फसल बिलकुल फेल हो जाती है। इसलिए रागी को ''फेमिन कराप'' भी कहा जाता है। कुछ वर्षों से खरीफ के मौसम में बराबर सुखाड़ की स्थिति के कारण किसान भाईयों ने टाँड़ जमीन पर गोड़ा धान की जगह मडुँआ की खेती शुरु कर दी है। इस क्षेत्र के लिए रागी के उपयुक्त प्रभेद निम्न हैं :

(1) ए-404 : 115-120 दिनों में तैयार होती है, इसकी औसत उपज 30 कि.ग्रे. है।

(2) बी.एम.-1 : करीब 80 दिनों में तैयार होती है और इसकी औसत उपज 16 कि.ग्रे. है। अगर मडुँआ को काट कर कोई दूसरी फसल लगानी हो तभी इस प्रभेद को लगाना उपयोगी है।

(3) बी.एम-2 : 100-105 दिनों में तैयार होती है और इसकी औसत उपज 24 कि.ग्रे. है।

गोन्दली : गोन्दली खरीफ में सबसे पहले कटने वाली फसल है। कभी इसकी खेती काफी होती थी पर इधर 10-15 वर्षों में इसकी खेती में काफी कमी आई है और अब जहाँ तहाँ पहाड़ों पर इसकी फसल दिखती है। जो किसान भाई गोन्दली की खेती करते हैं या करना चाहते हैं वह 'बिरसा गोन्दली-1' प्रभेद लगाकर अच्छी उपज ले सकते हैं। यह प्रभेद 55-60 दिनों में तैयार हो जाती है और इसकी औसत उपज 6 कि.ग्रे. है।

मक्का : मक्का भी झारखण्ड राज्य में अधिक क्षेत्रफल में लगाई जाती है। मक्का के उन्नतशील प्रभेद निम्नलिखित हैं -

1. सुआन कम्पोजिट-1 : यह प्रभेद सिंचित अवस्था में खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी उपज क्षमता 45-50 कि.ग्रे. (खरीफ में) तथा 55-60 कि.ग्रे. (रबी में) है। यह प्रभेद लगभग 100 दिन में पक कर तैयार हो जाती है।
2. बिरसा मकई-1 : यह प्रभेद 80-85 दिन में पक कर तैयार हो जाता है तथा इसकी उपज क्षमता 45-50 कि.ग्रे. (खरीफ में) तथा 50-55 कि.ग्रे. (रबी में) है।
3. बिरसा विकास मक्का-2 : यह लगभग 75-80 दिन में पक कर तैयार हो जाता है तथा इसकी उपज क्षमता 40-50 कि.ग्रे. है। यह रबी के लिए बहुत ही उपयुक्त प्रभेद है।

उरद : उरद एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है जो खरीफ में लगाया जाता है। इसके प्रमुख उन्नतशील प्रभेद टी-9, पन्त यू.-19 तथा बिरसा उरद-1 है। यह प्रभेद 80 दिनों में पक कर तैयार हो जाता है तथा इन प्रभेदों की औसत उपज क्षमता 10-12 कि.ग्रा. है।

मूंग : मूंग भी एक खरीफ दलहनी फसल है। इसके मुख्य प्रभेद सूनयना, पूसा विशाल, पी.एस.-16 पन्त मूंग-2 तथा के. 815 है। यह प्रभेद लगाने के 60-65 दिन पश्चात् पक कर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसत उपज क्षमता 10-12 कि.ग्रा. है।

कुल्थी : कुल्थी की उन्नतशील प्रभेद बिरसा कुल्थी-1, मधु तथा बी.आर.-10 है। कुल्थी के ये प्रभेद 100-105 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है तथा इसकी औसज उपज क्षमता 10-12 कि.ग्रा. है।

अरहर : अरहर भी एक महत्त्वपूर्ण खरीफ दलहनी फसल है। बिरसा अरहर-1, बी. आर.-65 इसके उन्नतशील प्रभेद है। जो लगभग 180-185 दिन में पक कर तैयार हो जाता है। इसकी औसत उपज क्षमता 20 कि.ग्रा. है।

मूंगफली : मूंगफली भी झारखण्ड राज्य की एक प्रमुख तेलहनी फसल है। मूंगफली को तैयार होने के अवधि के अनुसार इसे मुख्यतः तीन भागों में बाँटा गया है -

1. आगात : आगात किस्म वाली उन्नतशील प्रभेद 100-105 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। आगात किस्म की प्रमुख प्रभेद ए.के. 12-24, जे. एल.-24 (फुले प्रगति), जी.जी.-2 तथा टी.जी.-22 है। ए.के. 12-25 की उपज क्षमता 15-17 कि.ग्रा. हैं। फूलें प्रगति की उपज क्षमता 12-24 कि. ग्रा. तथा जी.जी-2 और टी.जी.-22 की उपज क्षमता 22-24 कि.ग्रा. है।
2. मध्य आगात : मध्य आगात वाली किस्म 115-120 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इनमें निम्नलिखित उन्नत प्रभेद हैं-

किस्म	उपज क्षमता (कि./हे.)
बिरसा मूंगफली-1	22-24
बिरसा मूंगफली-2	25-30
बिरसा मूंगफली-3	25-30
बिरसा बोल्ड	25-30

इनमें बिरसा बोल्ड-1 निर्यात के लिए सर्वोतम प्रभेद है।

रबी

झारखण्ड राज्य में रबी में लगने वाले प्रमुख फसल गेहूँ, चना, तोरी-राई, तीसी, मसूर इत्यादि है।

गेहूँ : गेहूँ की खेत रबी के मौसम में सिंचित तथा असिंचित दोनों अवस्था में की जाती है।

सिंचित अवस्था में समय पर बोआई :

समय पर बोआई के लिए सिंचित अवस्था में प्रमुख उन्नतशील प्रभेदों में एच.डी.-2733, एच.यू.डब्लू.-468, एच.डी.-2402, पी.वी.डब्लू.-343, के.-9107, के.-8804 तथा एन.डब्लू.-1012 प्रमुख हैं। इनकी औसत उपज क्षमता 35-40 क्विं./हे. है।

सिंचित अवस्था में विलम्ब से बोआई :

सिचिंत अवस्था में विलम्ब से बोआई के लिए उन्नतशील प्रभेदों में एच.डी.-2402, यू.डब्लू.-234, एच.पी.-1744, एम.डब्लू.-2045, गंगा तथा डब्लू-372 प्रमुख है। इनकी औसत उपज क्षमता 35-40 क्विं./हे. है।

असिंचित अवस्था में समय पर बोआई :

असिंचित अवस्था में समय पर बोआई के लिए उन्नतशील प्रभेदों में सी.-306, के.-8027, एच.डी.आर.-77, के.-8962 प्रमुख हैं। इन प्रभेद की औसत उपज क्षमता 20-25 क्विं./हे. है।

असिंचित अवस्था में विलम्ब से बोआई :

असिंचित अवस्था में विलम्ब से बोआई के लिए के.-8962 (इन्द्रा), जी. डब्लू.-173, डी.एल.-788-2 प्रभेद प्रमुख हैं एवं इनकी औसत उपज क्षमता 15-20 क्विं./हे. है।

चना : चना झारखण्ड राज्य की रबी की मुख्य दलहली फसल है। इसके प्रमुख उन्नत प्रभेद पन्त जी.-114, राधे, सी-235, बी.जी.-256, एवं एच.-208 प्रमुख है। एच.-208 प्रभेद असिंचित क्षेत्र एवं विलम्ब से बोआई के लिए उपयुक्त है। ये प्रभेद 135-145 दिनों में पककर तैयार हो जाते हैं तथा इनकी औसत उपज क्षमता 18-20 क्वि./हे. है।

तोरी-राई : तोरी-राई एक तेलहनी फसल है। इनके उन्नतशील प्रभेद निम्न-लिखित हैं -

	तोरी	राई
किस्म	बी.आर.-23, टी.-9	शिवानी, वरुणा, पूसा बोल्ड, क्रांति
उपज क्षमता	4-5 क्विं./हे.	8-10 क्विं./हे.

तीसी : झारखण्ड राज्य में तीसी के खेती तेलहनी फसल के रूप में की जाती है। तीसी की प्रमुख श्वेता, शुभ्रा तथा टी-397 है। इन सब प्रभेदों की उपज क्षमता 7-8 क्विं./हे. है।

मसूर : मसूर एक प्रमुख दलहनी फसल है। मसूर के प्रमुख प्रभेदों में बी.आर.-25, पी.एल.-639, पी.एल.-406, डी.पी.एल.-62 हैं। यह सारे प्रभेद 120-130 दिनों में पककर तैयार हो जाते हैं।

इस तरह से हम पाते हैं कि अगर किसान भाई विभिन्न फसलों के उन्नतशील प्रभेदों का चुनाव फसलोत्पादन में करें तो उन्हें प्रति हेक्टेयर अधिक से अधिक पैदावार मिलेगी। जिससे झारखण्ड राज्य भी खाद्यान्न उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भर हो सकेगा।

झारखण्ड की मिट्टी में पोषक तत्वों की समस्या और समाधान

खेती योग्य मिट्टी में पोषक तत्वों की समस्या :

झारखण्ड राज्य के कुल 80 लाख हेक्टेयर भूमि में 20 लाख हेक्टेयर भूमि खेती योग्य है। इन मिट्टीयों में फसल उत्पादन के लिए पोषक तत्वों का उपयोग किया जाता है। मिट्टी जाँच के आधार पर यह पाया गया है कि अनेक जगहों में पोषक तत्वों का समुचित प्रबंधन नहीं किया जा रहा है। कुछ पोषक तत्वों की कमी से फसलों के उपज में आशानुकूल वृद्धि नहीं हो पा रही है, इसे दूर करना आवश्यक है।

सर्वेक्षण के आधार पर पता चला है कि राँची, सिहभूम, पलामू तथा संथाल परगना क्षेत्र की मिट्टी में नेत्रजन तथा स्फुर के साथ-साथ पोटाश, गंधक, बोरन तथा मेलिब्डेनम की कमी है।

तालिका -1 : झारखण्ड राज्य की मिट्टी में पोषक तत्त्व की कमी

जिला	मिट्टी में कमी (प्रतिशत में)			
	पोटाश	सल्फर	बोरन	मेलिब्डेनम
राँची	30.2	74.0	36.0	84
सिंहभूम	48.5	42.8	36.0	58
पलामू	5.0	72.6	46.0	38
दुमका	29.0	19.3	.....	.....
गुमला	.....	57.0	.....	.....
लोहरदगा	.....	53.0	.....	.....

इसी तरह शोध के आधार पर राज्य के विभिन्न फसल-चक्रों में भी पोषक तत्त्व की कमी पाई गई हैं।

तालिका -2 : झारखण्ड राज्य के कुछ फसल-चक्रों में महत्वपूर्ण तत्वों की कमी

फसल चक्र	पोषक तत्वों की कमी
वर्ष में तीन से चार बार एक ही खेत में सब्जी उगाने वाले क्षेत्र	बोरन, कैलशियम, सल्फर, मोलिब्डेनम
धान-परती	फास्फोरस, पोटाश
सोयाबीन-गेहूँ, धान-मटर	फास्फोरस, सल्फर, कैलशियम
मूँगफली-अरहर	फास्फोरस, कैलशियम, बोरन
धान-सब्जी	पोटाश
मक्का-गेहूँ	नेत्रजन, फास्फोरस

अम्लीय मिट्टी की समस्याऐं :

झारखण्ड राज्य की लगभग 16 लाख हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि उँचा या मध्यम है। मृदा सर्वेक्षण के आधार पर यह पाया गया है कि 4 लाख हेक्टेयर जमीन में अम्लीयता की समस्या (पी.एच 5.5 से कम) है। संथाल परगना की 2 लाख हेक्टेयर जमीन में इस तरह की समस्या है। इस प्रकार की मिट्टी अम्लीय प्रकृति की है। अम्लीय मिट्टी में गेहुँ, मक्का, दलहनी एवं तेलहनी फसलों की उपज संतोषजनक नहीं हो पाती है। भूमि में अम्लीयता की समस्या मुख्यरूप से अधिक वर्षा के साथ मिट्टी के कटाव एवं केवल नेत्रजन युक्त खाद के प्रयोग के कारण है। इस प्रकार की मिट्टी में अनेक पोषक तत्वों की उपलब्धता में कमी हो जाती है। अधिक मृदा अम्लता के कारण एल्यूमिनियम, मैगनीज तथा लोहा अधिक घुलनशील बन जाते हैं और पौधों को इनकी अधिक मात्रा में उपलब्धि होने से हानिकारक प्रभाव पड़ता है। अम्लिक मिट्टी में मुख्यतः फास्फेट की कमी तथा कैलशियम की कमी के कारण फसल उत्पादन में कमी होती है। इसका निराकरण चूना के प्रयोग से किया जाता है।

अम्लीय मिट्टी में चूना का प्रयोग :

मिट्टी की अम्लियता में सुधार करने और उससे पौधों की बढ़वार के लिए अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न करने के लिए चूना का प्रयोग किया जाता है। जब फसलों के बुवाई के लिए कुंड खोला जाता है उसमें चूना का चूर्ण 2 से 4 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से डालने के बाद उसे पैर से ढक दिया जाता है। उसके बाद फसलों के लिए अनुशंसीत उर्वरकों एवं बीज की बुवाई की जाती है। चूना, डोलोमाईट तथा बेसिक स्लेग का उपयोग आम्लिक मिट्टी के सुधार के लिए करना चाहिए।

अम्लीय मिट्टी में रॉकफास्फेट का व्यवहार :

अम्लीय मृदाओं में पौधे के उचित विकास के लिए फास्फोरस की उपलब्धता बहुत कम है। मिट्टी में प्रयोग किया जाने वाला फास्फोरस का 46 से 80 प्रतिशत भाग अधुलनशील एल्युमिनियम तथा आयरन फास्फेट में परिणत हो जाता है। इससे पौधों को फास्फोरस की उपलब्धि कम हो जाती है। फास्फोरस की कमी को दूर करने के लिए मिट्टी में रॉकफास्फेट का प्रयोग अनुशंसित है।

इसके लिए निम्नलिखित तकनीकों को अपनाया जाता है :

- ❖ फास्फोरस की अनुशंसित मात्रा से 2.5 गुणा अधिक रॉकफास्फेट का छिड़काव मिट्टी में बुआई की अन्तिम तैयारी के समय करना चाहिए। या
- ❖ फसलो के लिए अनुशंसित फस्फोरस का 2/3 भाग रॉकफास्फेट एवं

1/3 भाग सुपर फास्फेट एक साथ मिलाकर बुआई के समय कुड़ में डाला जाता है। या

- फसलों के लिए अनुशंसित फोस्फारस की पूरी मात्रा रॉक फास्फेट के द्वारा देने के लिए बुआई के 20 -25 दिन पहले मिट्टी में आर्द्रता की उपस्थिति में छिड़काव किया जाता है या रॉकफास्फेट के साथ-साथ समुचित मात्रा में कम्पोस्ट गोबर की खाद का प्रयोग अनुशंसित है।

कम्पोस्ट बनाने की उन्नत विधि :

कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की अच्छी उपलब्धता के लिए इसे तैयार करते समय ट्राईकोरस स्पीरालीस, पैलीलोमाईसीज फुजीस्फारोरस, एसपरजीलस एवामोरी, एजोटोबैक्टर क्रोकोकम और रॉकफास्फेट (1 से 5 प्रतिशत) कम्पोस्ट के गड्डा में डालने के लिए अनुशंसित है। पौधों के अवशेषों के साथ भी उपरोक्त चीजो को मिलाकर अच्छा कम्पोस्ट बनाया जा सकता है।

गढ़ढें का आकार	:	1 मी. x 1 मी. x 1 मी.
सामग्री	:	खरपतवार, कूड़ा-कचरा, फसलो के डंठल, जलकुम्भी, पशुओं के मल-मूत्र एवं इनसे सने पुआल इत्यादि।
मात्रा	:	100 कि.ग्रा. प्रति गढ़ढा
यूरिया खाद	:	1/2 किलो ग्राम प्रति गढ़ढा
फास्फोरस	:	5 कि0 ग्रा0 म्यूरेट रॉकफास्फेट प्रति गढ़ढा
गोबर का पतला घोल	:	10 कि0 ग्रा0 (प्रारम्भ में)
आर्द्रता	:	80 से 100 प्रतिशत
अवशिष्ठ की पलटाई	:	15, 30 और 45 दिनों पर
तैयार होने का समय	:	4 महीना

जीवाणु खाद का व्यवहार :

कम्पोस्ट के व्यवहार में उसकी गुणवक्ता तथा उसकी परिपक्वता का ध्यान देना आवश्यक है। अच्छे कम्पोस्ट में कम से कम 16-20 प्रतिशत जैविक कार्बन, 0.8 प्रतिशत नेत्रजन, 0.5-0.8 प्रतिशत फास्फेट तथा 1.2 प्रतिशत पोटाशियम होना चाहिए और कार्बन/नेत्रजन अनुपात 20:1 से कम होना चाहिए। दलहनी फसलो में 0.5 कि.ग्रा./हे.

राइजोबियम कल्चर का प्रयोग कर 25 से 30 कि.ग्रा. नेत्रजन उर्वरक प्रति हेक्टेयर बचत किया जा सकता है। धान की फसलों में जहाँ पानी का जमाव होता है वहाँ 10 कि.ग्रा. नील हरित शैवाल का प्रयोग कर 30 कि.ग्रा. नेत्रजन उर्वरक प्रति हेक्टेयर बचाया जा सकता है। उपरोक्त दोनों जीवाणु खाद का उत्पादन बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग में किया जाता है। जिसे किसान भाई आठ रूपये प्रति पैकेट (100 ग्राम) की दर से खरीफ एवं रबी मौसम में प्राप्त कर सकते हैं।

सुक्ष्म पोषक तत्वों का व्यवहार :

अम्लीय मिट्टी में प्राय: बोरन और मोलिब्डेनम की उपलब्धता पौधों के लिए कम होता है। इस प्रकार के मिट्टी में इनकी कमी को दूर करने के लिए 1 से 1.5 कि.ग्रा. मोलिब्डेनम (अमोनियम या सोडियम मौलिब्डेट) का प्रयोग प्रति हेक्टेयर के दर से किया जाता है। यदि अमोनियम मोलिब्डेट का 0.1 प्रतिशत घोल का छिडकाव पौधों पर किया जाये तो इसकी कमी दूर हो सकती है। बोरन की कमी दूर करने के लिए 1.5 कि.ग्रा. बोरन प्रति हेक्टेयर (15 कि.ग्रा. बोरेक्स) सब्जी उगाने वाले क्षेत्रों में डालना चाहिए। 0.2 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव भी किया जा सकता है।

पौधें के लिए संतुलित पोषक तत्वों का प्रबंधन :

एक लम्बे समय से विभिन्न उर्वरकों पर किए गये अनुसंधान के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि सोयबीन, मक्का, धान एवं गेहूँ की अच्छी उपज के लिए अनुशंसित नेत्रजन, फासफोरस एवं पोटाश के साथ-साथ चूना एवं गोबर की खाद के प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता में ह्रास नहीं होता है। यहाँ पर आवश्यक होगी कि किसान भाई खाद का व्यवहार मिट्टी जाँच के आधार पर ही करें।

झारखण्ड राज्य में मिट्टी जाँच व्यवस्था :

झारखण्ड राज्य में मिट्टी जाँच की सुविधा में बहुत कमी है। इसके 22 जिलों के 212 प्रखण्ड में इसकी समुचित व्यवस्था करनी होगी। इससे किसानों को मिट्टी जाँच के आधार पर संतुलित मात्रा में खाद का व्यवहार करने की जरूरत पूरी होगी।

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग के मृदा परीक्षण ईकाई में मिट्टी की जाँच की जाती है। विभाग द्वारा किसानों को नि:शुल्क मिट्टी जाँच की सुविधा दी जाती है।

मिट्टी की जाँच की सुविधा के लिए तर्कसंगत प्रयास की आवश्यकता :

- ❖ वर्त्तमान प्रयोगशाला के कार्य क्षमता को बढ़ाना।
- ❖ चलन्त यान, प्रयोगशाला की संख्या को बढ़ाना।
- ❖ किसानों को मिट्टी जाँच के महत्व को समझाना।

- प्रसार कार्यकर्त्ताओं की कार्यक्षमता को बढ़ाना।
- किसानों द्वारा वैज्ञानिकों के अनुशंसा के अनुसार खेती करना।
- मिट्टी जाँच के कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षण देना।
- मिट्टी स्वास्थ पत्र (स्वायल हेल्थ कार्ड) की शुरूआत करना।
- सब्जी उगाने वाले क्षेत्रों में सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ-साथ सल्फर, कैलशियम एवं मैगनीशियम की मिट्टी में जाँच की आवश्यकता।

जीवाणु एवं जैविक खाद

आजकल रासायनिक खादों के प्रयोग से मृदा की प्राकृतिक उर्वरा-शक्ति दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है। आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यह महसूस किया जा रहा है कि रासायनिक खादों एवं विभिन्न कृषि रसायनों (कीटनाशक, फफूंद नाशक एवं खर-पतवार नाशक) के प्रयोग से मृदा, जल, वायु एवं मानव सभी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। जो मानव शरीर में किसी न किसी रूप में जाकर विभिन्न रोगों (विकृतियों) को जन्म दे रहा है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो गया है कि इन रासायनिक खादों के विकल्प के रूप में जीवाणु एवं जैविक खाद का प्रयोग किया जाये। जीवाणु खाद में दलहनी फसलों के लिए मुख्य रूप से ''राइजोबियम कल्चर'', अनाज और सब्जी वाली फसलों के लिए ''एजोटोबैक्टर कल्चर'', मक्का, सरसों, राई और चारे वाली फसलों के लिए ''अजोस्पिरिलम कल्चर'' और धान फसल के लिए ''नील हरित शैवाल'' (ब्लू ग्रीन एल्गी) कल्चर एवं जैविक खाद में मुख्य रूप से ''वर्मी कम्पोस्ट'' एवं ''इनरिच्ड'' का प्रयोग किया जाये।

जीवाणु खाद :

राइजोबियम कल्चर : दलहनी फसलों के जड़ों में गुलाबी रंग का गांठ बनता है। इन गाठों में ही राइजोबियम नामक जीवाणु रहता है जो वायुमंडलीय नेत्रजन गैस को भूमि में स्थापित करता है, जिन्हे पौधों द्वारा आसानी से शोषित कर लिया जाता है। राइजोबियम कल्चर के प्रयोग से भूमि में लगभग 15 से 20 कि0 ग्रा0 प्रति हेक्टेयर नेत्रजन खाद का लाभ होता है। इसके अलावा उपज में लगभग 10 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इस कल्चर खाद का प्रयोग मूंग, उरद, अरहर सोयाबिन, मटर, चना, मूँगफली, मसूर एवं बरसीम के फसल में करते हैं। अलग-अलग फसलों के लिए अलग-अलग राइजोबियम कल्चर का प्रयोग किया जाता है।

एजोटोबैक्टर कल्चर :

यह सुक्ष्म जीवाणु भी राइजोबियम जीवाणु के तरह ही वायुमण्डलीय नेत्रजन को भूमि में स्थापित करता है। इसकी कुछ प्रजातियाँ जैसे - एजोटोबैक्टर, बिजरिंकी, क्रूकोकम, एजीलिस इत्यादि विभिन्न फसलों में वायुमंडलीय नेत्रजन उपलब्ध कराने में सक्षम् होते हैं। ये जीवाणु जड़ों में किसी प्रकार का गांठ नहीं बनाते हैं। ये जीवाणु मिट्टी में पौधों के जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप में पाये जाते हैं तथा नेत्रजन गैस को अमोनिया में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इस जीवाणु खाद के प्रयोग से 10-20 किलोग्राम नेत्रजन प्रति हेक्टर की प्राप्ति होती है तथा अनाज वाली फसलों में

10-20 प्रतिशत एवं सब्जियों में 10 प्रतिशत तक की उपज में वृद्धि पायी गयी है। ये जीवाणु खाद बीजों के अंकुरण में भी सहायता करते हैं एवं इनके प्रयोग से जड़ों में होने वाली फफुंद रोग से भी बचाव होता है। इस कल्चर का प्रयोग गेहूँ, जौ, मक्का, बैंगन, टमाटर, आलू एवं तेलहनी फसलों में करते हैं।

एजोस्पिरिलम कल्चर :

इसके जीवाणु पौधों के जड़ों के आसपास और जड़ों पर समूह बनाकर रहते हैं तथा पौधों को वायुमण्डलीय नेत्रजन उपलब्ध कराते हैं। इस कल्चर का प्रयोग ज्वार, बाजरा महुँआ, मक्का, घास एवं चारे वाली फसलों के पैदवार बढ़ाने के लिए करते हैं। इस जीवाणु खाद के प्रयोग से 15-20 किलोग्राम नेत्रजन प्रति हेक्टेयर की प्राप्ति होती है। इसके अतिरिक्त इसके जीवाणु कई प्रकार के पादप हरमोन्स छोड़ते हैं जो पौधों के वृद्धि के लिए आवश्यक है। एजोस्पिरिलम जड़ों के विस्तार एवं फैलाव में भी सहायक होते हैं, जिससे पोषक तत्वों, खनिजों एवं जल के अवशोषण क्रिया में वृद्धि होती है। जिन फसलों में अधिक पानी की मात्रा दी जाती है वहाँ ये विशेष लाभकारी होते है।

जीवाणु खाद से बीज उपचारित करने की विधि :

सभी प्रकार के जीवाणु खाद से बीज उपचारित करने का तरीका एक जैसा ही है। एक पैकेट (100 ग्राम) कल्चर आधा एकड़ जमीन में बोये जाने वाले बीजों को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होता है।

बीजों को उपचारित करने के लिए सबसे पहले आधा लीटर पानी में लगभग 100 ग्राम गुड़ डालकर खूब उबालें और जब इसकी चासनी तैयार हो जाये, तो इसे ठण्डा करने के बाद एक पैकेट कल्चर (जीवाणु खाद) डालकर अच्छी तरह मिला दें। अब यह बीजों को उपचारित करने वाला घोल बन जाएगा। इसके बाद आधा एकड़ भूमि के लिए पर्याप्त बीज को पानी से धोकर सुखा लें। कल्चर को बीजों के उपर थोड़-थोड़ा डालकर स्वच्छ स्थान, अखबार या कपड़े पर हाथों से इस प्रकार मिलायें कि बीजों के ऊपर कल्चर की एक परत चढ़ जाय। उपचारित बीजों को छाया में सुखाकर शीघ्र ही उसकी बुवाई कर दें।

जिन फसलों की पौध (बिचड़ा) लगायी जाती है उनकी रोपाई करने से पूर्व पौधों की जड़ों को उक्त घोल में डुबोकर उपचरित किया जा सकता है।

जीवाणु खाद के प्रयोग से लाभ :

- ❖ कल्चर के प्रयोग से फसलों की पैदावार में वृद्धि होता है।
- ❖ जीवाणु खाद के प्रयोग से रासायनिक उर्वरक की बचत होती है।

- ❖ इसके प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होता है।
- ❖ कल्चर द्वारा उपचारित करने से बीजों की अंकुरण क्षमता बढ़ जाती है।
- ❖ दलहनी फसलों के बाद अन्य दूसरी फसलों को भी नेत्रजन प्राप्त होता है।

सावधानियाँ :

- ❖ जीवाणु खाद को धूप एवं अधिक गर्मी से बचाकर सुरक्षित स्थान पर रखें।
- ❖ कल्चर जिस फसल का हो उसका प्रयोग उसी फसल के बीज के लिए करें।
- ❖ कल्चर पैकेट खरीदते समय उसका नाम एवं उत्पादन तिथि आवश्य देख लें।
- ❖ उपचारित किये गये बीज को छाया में सुखाकर बोआई शीघ्र कर दें।
- ❖ जीवाणु खाद की क्षमता बढ़ाने के लिए फास्फेट (स्फूर) खाद की पूरी मात्रा मिट्टी में जरूर मिलावें।
- ❖ झारखण्ड की मिट्टी अम्लीय स्वभाव की है इसलिए चूने का व्यवहार अवश्य करें या बीजों को उपचारित करने के बाद चूने का परतीकरण उस पर आवश्य करें।
- ❖ जीवाणु खाद के जीवाणु उदासीन मिट्टी में काफी सक्रिय होती है।

नील हरित शैवाल (ब्लू ग्रीन अल्गी) खाद :

नील हरित शैवाल या ब्लू ग्रीन अल्गी एक तन्तुदार प्रकाश संश्लेषी सूक्ष्मजीव होते हैं, जो वायुमंण्डलीय नेत्रजन गैस को भूमि में स्थापित करते हैं एवं पौधों को उपलब्ध कराते हैं। नील हरति शैवाल (काई) प्राकृति में उपलब्ध ऐसा जैविक स्रोत है, जिनका उपयोग धान की खेती में जैविक उर्वरक के रूप में किया जाता है। बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, कांके, राँची के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग में किये गये अनुसंधान में यह पाया गया है कि नील हरित शैवाल खाद के प्रयोग से 20-30 किलोग्राम नेत्रजन की प्राप्ति होती है जो कि लगभग 65 किलोग्राम रसायनिक उर्वरक (यूरिया) के बराबर है।

नील हरित शैवाल खाद के प्रयोग से लाभ :

1. इसके इस्तेमाल से खेत की मिट्टी में सुधार होता है। यह उसर भूमि सुधारने में भी लाभदायक है।

2. शैवाल खाद के प्रयोग से रसायनिक उर्वरक का बचत होता है।
3. इस खाद को किसान अपने घरों में स्वयं तैयार कर सकते हैं।
4. यह खाद बहुत ही किफायती है तथा छोटे एवं सीमांत किसान के लिए उपयुक्त है। इसमें लागत कम लगता है एवं लाभ ज्यादे मिलता है।
5. इस खाद को धूप में सुखाकर कई वर्षों तक सुरक्षित रखा जा सकता है।
6. इसके प्रयोग से लगभग 65 किलोग्राम रसायनिक उर्वरक का बचत होता है।
7. इस अल्गी खाद का प्रयोग मुख्य रूप से धान की फसल में करते हैं इससे धान के अलावे अगली फसल को भी नेत्रजन मिलता है।
8. शैवाल खाद के प्रयोग से धान के उपज में लगभग 10-15 प्रतिशत की वृद्धि होता है।

शैवाल खाद बनाने की विधि :

1. गैल्बनाइज्ड (जंग रोधी) लोहे की शीट से बना 2 मीटर लम्बा, 1 मीटर चौड़ा तथा 15 से.मी. ऊँचा एक चौकोर बरतन (ट्रे) बनायें। इस ट्रे को किसान ईट एवं सिमेंट के द्वारा भी बना सकते हैं या किसान अपने आस-पास के बेकार भूमि पर भी इसी आकार का गड्ढा खोदकर उसमें नीचे पोलीथीन शीट बिछा कर भी इस्तेमाल कर सकते हैं। लम्बाई एवं चौड़ाई आवश्यकतानुसार बढ़ायी या घटाई जा सकती है।
2. ट्रे में 10 किलो ग्राम दोमट मिट्टी डालें एवं उसमें 200 ग्राम सुपर फास्फेट खाद एवं 2 ग्राम सोडियम मोलिब्डेट नामक रसायन अच्छी तरह मिलायें। यदि मिट्टी अम्लीय स्वभाव की हो तो 10 ग्राम चूना भी मिलाएँ। इसके बाद इस ट्रे में 5 से 10 से0मी0 ऊचाई तक पानी भरें। इसे कुछ घंटो के लिए छोड़ दें ताकि मिट्टी अच्छी तरह बैठ जाय और पानी साफ हो जाय।
3. इसके बाद पानी की सतह पर एक मुट्ठी अल्गी कल्चर (अल्गी बीज) छिड़क दें। यह प्रारम्भिक कल्चर बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग से प्राप्त किया जा सकता है।
4. ट्रे को धूप में रखे जहाँ हवा आती हो। गर्मी के मौसम में धूप की गर्मी से अल्गी की बढ़वार ज्यादे एवं जल्दी होती है। 10-15 दिनों बाद पानी की सतह पर काई (अल्गी) की मोटी परत दिखाई देगी। जब परत मोटी हो जाय तो पानी देना बन्द कर दें।

5. पानी को सूखने के लिए छोड़ दें और सुखने के बाद उपर के अल्गी परत या पपड़ी को खुरच कर साफ कपड़े या प्लास्टिक थैले में भरकर रख लें।

6. पुन: ट्रे में पानी डालकर इस क्रिया को दूहरायें। इस प्रकार भरे गये ट्रे से 2 से 3 बार अल्गी का फसल लिया जा सकता है।

इस कार्यक्रम को सालों भर चला कर अल्गी खाद का उत्पादन किया जा सकता है।

शैवाल खाद की मात्रा एवं प्रयोग विधि :

1. धान के रोपाई के एक सप्ताह बाद खेत में 3-4 से.मी. पानी भर कर उसमें 10 किलोग्राम प्रति हैक्टर अल्गी कल्चर छिड़क दें। यदि इससे ज्यादे कल्चर के खेत में डाल दिया गया है तो उससे कोई नुकसान नहीं होगा बल्कि इससे शैवाल की बढ़वार तेज होगा।

2. कीटनाशक एवं रोगनाशक दवाओं के प्रयोग से अल्गी के क्रिया-कलाप पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता है।

3. अगर एक ही खेत में लगातार कई साल तक अल्गी डाला जायेगा तो पूरी तरह से उस खेत में अल्गी स्थापित हो जायेगें और फिर इसे डालने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

सावधानियाँ :

1. साफ एवं भूरभूरी दोमट मिट्टी ही प्रयोग में लायें।
2. जब शैवाल (काई) खाद का खेत में छिड़काव करें तो खेत में कम से कम 3-4 से.मी. पानी अवश्य रखें।
3. यह ध्यान रखें कि शैवाल खाद को रसायनिक उर्वरक या अन्य रसायनों के सीधे सम्पर्क में न आने दें।
4. शैवाल खाद बनाते समय ट्रे में नेत्रजन धारी उर्वरक का प्रयोग नहीं करें।
5. शैवाल खाद को सूखे स्थान में रखें।

जैविक खाद :

जैविक खाद का अभिप्राय उन सभी कार्बनिक पदार्थो से है जो कि सड़ने या गलने पर जीवांश पदार्थ या कार्बनिक पदार्थ पैदा करती है। इसे हम कम्पोस्ट खाद भी कहते हैं। इनमें मुख्यत: वनस्पति सामग्री और पशुओं का बिछावन, गोबर एवं मल मूत्र होता है। इसलिए इनमें वे सभी पोषक तत्व उपस्थित रहते हैं जो कि पौधों के

वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं। जैविक खाद फसल के लिए बहुत ही उत्तम खाद मानी जाती है।

जैविक खाद या कम्पोस्ट खाद को मुख्यतः तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है :

1. फास्फो कम्पोस्ट, 2. इनरिच्ड कम्पोस्ट एवं 3. वर्मी कम्पोस्ट

फास्फो कम्पोस्ट

इस खाद में फास्फोरस (स्फूर) की मात्रा अन्य कम्पोस्ट खादों की अपेक्षा ज्यादा होता है। फास्फो कम्पोस्ट में 3-7 प्रतिशत फास्फोरस (स्फूर) होता है जबकि साधारण कम्पोस्ट में यह अधिकतम 1.0 प्रतिशत तक पाया जाता है।

फास्फोकम्पोस्ट बनाने की विधि :

यह विधि बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन द्वारा विकसित एवं आनुशंसित है। इस विधि द्वारा फास्फोकम्पोस्ट बनाने का तरीका बहुत ही आसान एवं सरल है।

1. सबसे पहले 2 मीटर लम्बा, 1 मीटर चौड़ा, 1 मीटर गहरा गड्डा बनायें। आवश्यकतानुसार एक या एक से अधिक गड्ढे बना सकते हैं। यह गड्ढा कच्चा या पक्का किसी भी तरह का हो सकता है।

2. सामग्री : खरपतवार, कुड़ा - कचरा, फसलों के अवशेष, जल कुम्भी, थेथर, पुटुस, करंज या अन्य जंगली पौधों की मुलायम पत्तियाँ, पुआल इत्यादि। इन सभी सामग्रियों को निम्न अनुपात में सुखे वजन के अनुसार मिला कर गड्ढों में भरें।

कार्बनिक कचरा	:	गोबर	:	मिट्टी	:	कम्पोस्ट
8	:	1	:	0.5	:	0.5

3. खाद बनाने के लिए उपलब्ध सामग्री से कई परत बनाकर एक ही साथ भरें तथा 80 - 100 प्रतिशत नमी (पानी मिलाकर) बनाये रखें।

4. उपलब्ध सामग्री से भरे गड्ढे में 2.5 किलोग्राम नेत्रजन प्रतिटन के हिसाब से यूरिया तथा 12.5 किलोग्राम राक फास्फेट या सिंगल सुपर फास्फेट डालें।

5. गोबर, मिट्टी , कम्पोस्ट एवं रॉक फास्फेट तथा यूरिया को एक बर्तन या ड्रम में डालकर 80 - 100 लीटर पानी से घोल बनायें। इस घोल

को गड्ढे में 15-20 से0मी0 मोटी अवशिष्ट (सामग्री) का परत बनाकर उसके उपर छिड़काव करें। यह क्रिया गड्ढे भरने तक करें। जब तक उसकी ऊंचाई जमीन की सतह से 30 से.मी. ऊंची न हो जायें।

6. उपरोक्त विधि से गड्ढे को भरकर उपर से बारीक मिट्टी की पतली परत (5 सेमी.) से गड्ढे को ढंक दें और अन्त में गोबर से लेप कर गड्ढे को बन्द कर दें।

7. अवशिष्ट (सामग्री) की पलटाई 15, 30 तथा 45 दिनों के अन्तराल पर करें तथा उसमें आवश्यकतानुसार पानी डालकर नमी बनायें रखें।

8. 3-4 महीने के बाद देखेगें कि उत्तम कोटी की भूरभूरी खाद तैयार हो गई है। इस खाद को सुखे वजन के अनुसार इसका प्रयोग फसलों की बुआई के समय सुपर फास्फेट खाद की जगह पर कर सकते हैं। इस फास्फो कम्पोस्ट खाद का प्रयोग सभी प्रकार के फसलों में किया जा सकता है।

वर्मी कम्पोस्ट (केंचुआ खाद) :-

जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि केंचुआ द्वारा बनाया गया कम्पोस्ट खाद को वर्मी कम्पोस्ट या केंचुआ खाद कहते हैं। साधारण कम्पोस्ट बनाने के लिए इक्कठा की गयी सामग्री में ही केंचुआ डालकर वर्मी कम्पोस्ट तैयार किया जाता है। इसमें कार्बनिक पदार्थ एवं ह्यूमस ज्यादे मात्रा में पाया जाता है। इस खाद में मुख्य पोषक तत्व के अतिरिक्त दूसरे सूक्ष्म पोषक तत्व तथा कुछ हारमोन्स् एवं इन्जाइस भी पाये जाते हैं जो पोधों के वृद्धि के लिए लाभदायक हैं। वर्मी कम्पोस्टिंग में स्थानीय केंचुआ के किस्म का प्रयोग करें। यहाँ छोटानागपुर में *एसेनीया फोटीडा (Eisenia Foetida)* नामक किस्म पायी जाती है जो यहाँ के वातवारण के लिए उपयुक्त है।

वर्मी कम्पोस्ट बनाने की विधि :-

1. केंचुआ खाद बनाने के लिए सबसे पहले ऐसे स्थान का चुनाव करें, जहाँ धूप नहीं आती हो, लेकिन वह स्थान हवादार हो। ऐसे स्थान पर 2 मीटर लम्बा, 1 मीटर चौड़ा जगह के चारों ओर मेड़ बना लें जिससे कम्पोस्टिंग पदार्थ इधर-इधर बेकार न हो।

2. सबसे पहले नीचे 6 इंच का एक परत आधा सड़ा हुआ गोबर या वर्मी कम्पोस्ट उसमें थोड़ा उपजाऊ मिट्टी मिला कर फैला लें। जिससे केचुआ को प्रारम्भिक अवस्था में भोजन मिल सके। इसके बाद 40 केचुआ प्रति वर्ग फीट के हिसाब से उसमें डाल दें।

3. उसके बाद घर एवं रसोई घर का अवशेष आदि का एक परत डालें जो लगभग 8-10 इंच मोटा हो।

4. दूसरा परत को डालने के बाद पुआल, सुखी पत्तियाँ एवं गोबर आदि को आधा सड़ाकर दूसरे परत के ऊपर डालें। प्रत्येक परत के बाद इतना पानी का छिड़काव करें कि जिससे परत में नमी हो जाये।

5. अन्त में 3-4 इंच मोटा परत गोबर का डालकर बोरा से ढंक दें जिससे केंचुआ आसानी से उपर नीचे घूम सके। प्रकाश के उपस्थिति में केंचुआ का आवगमन कम हो जाता है जिससे खाद बनाने में समय लग सकता है इसलिए ढंकना आवश्यक है।

आप देखेगें कि 50-60 दिनों में वर्मी कम्पोस्ट खाद तैयार हो जायेगा। सबसे ऊपर के परत को हटायें तथा उसमें से केंचुआ को चुनकर निकाल ले। इस प्रकार नीचे के परत को छोड़ कर बाकी सारा खाद इक्ट्ठा कर लें चलनी से छानकर केचुओं को अलग किया जा सकता है। पुनः इस विधि को दुहरायें।

इस प्रकार तैयार वर्मी कम्पोस्ट खाद में पोषक तत्वों की मात्रा निम्नलिखित होती है:

पोषक तत्व	प्रतिशत मात्रा
नेत्रजन	0.6 - 1.2
स्फूर	1.34 - 2.2
पोटाश	0.4 - 0.6
कैल्सियम	0.44
मैग्नेशियम	0.15

इनके अलावा इन्जाइम, हारमोन्स एवं अन्य सुक्ष्म पोषक तत्व भी पाये जाते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट खाद से लाभ :

1. केंचुआ द्वारा तैयार खाद में पोषक तत्वों की मात्रा साधारण कम्पोस्ट की अपेक्षा अधिक होता है।
2. भूमि के उर्वरता में वृद्धि होती है।
3. फसलों के उपज में वृद्धि होती है।
4. इस खाद का प्रयोग मुख्य रूप से फूल के पौधों एवं किचेन गार्डेन में किया जा सकता है, जिससे फूल के आकार में वृद्धि होती है।
5. वर्मी कम्पोस्ट खाद के प्रयोग से भूमि में वायु का संचार सुचारू रूप से होता है।

6. यह खाद भूमि के संरचना एवं भौतिक दशा सुधारने में सहायक होता है।
7. इसके प्रयोग से भूमि की दशा एवं स्वास्थ में सुधार होता है।

वर्मी कम्पोस्ट बनाने में सावधानियाँ :-

1. वर्मी कम्पोस्ट खाद बनाते समय यह ध्यान रखें कि नमी की कमी न हो। नमी बनाये रखने के लिए आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करें।
2. खाद बनाते समय यह ध्यान रखे कि उनमें ऐसे पदार्थ (सामग्री) का प्रयोग नही करें जिसका अपघटन नहीं होता है या जो पदार्थ सड़ता नहीं है। जैसे - प्लाटिक, लोहा, कांच इत्यादि का प्रयोग नहीं करें।
3. कम्पोस्ट बेड (ढेर) को ढंक कर रखें।
4. वर्मी कम्पोस्ट बेड का तापक्रम 35° से.ग्रे. से ज्यादे नहीं होना चाहिये।
5. चींटी एवं मेंढ़क आदि से केचुओं को बचाकर रखें।
6. कीटनाशक दवाओं का प्रयोग नहीं करें।
7. खाद बनाने के सामग्री में किसी भी तरह का रासायनिक उर्वरक नहीं मिलावें।
8. कम्पोस्ट बेड के पास पानी नहीं जमने दें।

सब्जी उत्पादन, भंडारण एवं मूल्यवर्द्धन की उन्नतशील तकनीक

खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर होने के साथ ही अब संतुलित पोषण की आवश्यकता को महत्त्व दिया जाने लगा है। भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में जहाँ शाकाहार को महत्त्व दिया जाता है, सब्जियों का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। कुल जनसंख्या के आधार पर संतुलित पोषण की दृष्टि से सब्जियों का उत्पादन देश में काफी कम है। इसे उन्नत उत्पादन तकनीकों द्वारा बढ़ाने की अपार संभावनाएं हैं। अन्य फसलों की तुलना में सब्जियों की खेती से प्रति इकाई क्षेत्रफल अधिक आमदनी प्राप्त होती है।

उन्नत किस्में

विभिन्न सब्जियों की क्षेत्र के लिए उपयुक्त एवं अधिक पैदावार देने वाली किस्में तालिका-1 में दी गई हैं -

तालिका-1 : सब्जियों की अनुशंसित किस्में

फसल	क्षेत्र के लिए अनुशंसित किस्में
बैंगन	स्वर्ण श्री, स्वर्णमणि, स्वर्ण प्रतिभा, स्वर्ण श्यामली, अर्का केशव, अर्का निधि, पंत ऋतुराज, पंत सम्राट, पूसा क्रान्ति, नरेन्द्र हाईब्रीड-2, पूसा हाईब्रीड-6
टमाटर	स्वर्ण वैभव, स्वर्ण नवीन, स्वर्ण लालिमा, पूसा शीतल, बी.टी.-17, बी.टी.-20.2.1, एन.डी.टी.-3, शक्ति, अर्का आभा, सी.एच.आर.टी. -4, सी.एच.डी.टी.-1, अर्का वरदान, पूसा हाईब्रीड-1, के.एस. -118, एन.डी.टी-8ए, सी.एच.डी.टी-2
फुलगोभी	क) अर्ली कुंवारी, (ख) पूसा अर्ली सिन्थेटिक, पूसा दीपाली, पूसा कातकी (ग) पंत शुभ्रा, पूसा शुभ्रा, पूसा सिन्थेटिक, (घ) पूसा स्नो बॉल, पूसा स्नो बॉल के.-1, स्नो बॉल-16, पूसा हाईब्रीड-2
बंदगोभी	क) ग्रीन एक्सप्रेस, आई.ए.एच.एस.-5, गोल्डेन एकर, प्राईड ऑफ इन्डिया, पूसा मुक्ता
	ख) पूरा ड्रमहेड, अर्ली ड्रमहेड, लेट ड्रमहेड, सुवर्णा (बी.एस.एस. -115), श्री गणेश गोल
फ्रांसबीन (झाड़ीदार)	स्वर्णप्रिया, अर्का कोमल, पंत अनुपमा, कंटेडर

फसल	क्षेत्र के लिए अनुशंसित किस्में
फ्रांसबीन (लत्तीदार)	स्वर्णलता, बिरसा प्रिया
भिण्डी	अर्का अनामिका, अर्का अभय, परभनी क्रांति, वर्षा उन्नत, वर्षा उपहार
मटर	अर्केल, आजाद मटर-1, आजाद मटर-3, बोनबिले, वी.एल.अगेती मटर-7, विवेक-6
परवल	स्वर्णरेखा, स्वर्ण अलौकिक
लोबिया	अर्का गरिमा, पूसा फाल्गुनी, पूसा दो फसली
प्याज	अर्का निकेतन, अर्का कल्याण, पूसा माधवी, नासिक रेड, पटना रेड, अर्का कीर्तिमान, अर्का लालिमा
मिर्च	अर्का लोहित, पूसा ज्वाला, पंजाब लाल, भाग्य लक्ष्मी, आन्ध्र ज्योति, बी.एस.एस.-141, बी.एस.एस.-138
शिमला मिर्च	अर्का गौरव, अर्का मोहिनी, बुलनोज, कैलिफोर्निया वन्डर, भारत
कोहड़ा	अर्का सूर्यमुखी, अर्का चन्दन, पूसा विश्वास
करेला	अर्का हरित, प्रिया, कल्याणपुर सोना, एन.सी.-84, पूसा हाईब्रीड-1
खीरा	स्वर्ण पूर्णा, स्वर्ण अगेती, स्वर्ण शीतल, पूसा संयोग
नेनुवा	पूसा चिकनी, सतपूतिया
तरबूज	अर्का मणिक, अर्का ज्योति, सुगर बेबी
लौकी	अर्का बहार, पूसा समर, प्रोलिफिक लोंग, पूसा समर प्रालिफिक राउंड, पूसा मेंघदूत, पूसा मंजरी,
झींगी	स्वर्ण मंजरी, स्वर्ण उपहार, पूसा नसदार, पूसा सुप्रिया
मूली	अर्का निशान्त, जापानी सफेद, पूसा हिमानी, पूसा रश्मि
गाजर	अर्ली नेन्टिस, पूसा केसर
पालक	पूसा ज्योति, आल ग्रीन
मैंथी	पूसा अर्ली बन्चिग, कसूरी

भूमि का चुनाव एवं तैयारी

सब्जी उत्पादन हेतु अच्छी उर्वरता वाली जैव पदार्थ युक्त मिट्टी का चुनाव करना चाहिए। भूमि की 3-4 बार जुताई करके पाटा लगाकर समतल कर लें। सिंचाई की व्यवस्था के अनुसार उचित आकार की क्यारियां बनायें।

बुआई/रोपाई का समय

विभिन्न सब्जियों के लिए बुआई का समय मौसम के अनुसार अलग-अलग होता है। अनुकूल अवधि में फसल उगाने पर अधिकतम पैदावार प्राप्त होती है। जबकि समय से पूर्व या देरी से बुआई/रोपाई करने से फसल पर कुप्रभाव पड़ता है। विभिन्न सब्जियों की बुआई/रोपाई का उचित समय तालिका-2 में दर्शाया गया है।

लत्ती वाली सब्जियों जैसे कोंहड़ा, करेला, खीरा, नेनुवा, तरबूज, लौकी, झींगी की अगेती फसल लेने के लिए पालिथीन की थैलियों में सड़ी हुई गोबर की खाद तथा मिट्टी की बराबर मात्रा से बने मिश्रण को भरकर बीज बोयें। थैलियों को धूप वाले स्थान पर रखें तथा पारदर्शी पालिथीन की चादर से ढ़क दें। छः से आठ सप्ताह में पौधे रोपाई योग्य हो जाते हैं। इनकी थालों में उचित दूरी पर रोपाई की जा सकती है।

बीज की मात्रा

अनुशंसित मात्रा में बीज का उपयोग करने से पैदावार में वृद्धि होती है। जबकि आवश्यकता से अधिक अथवा कम मात्रा में बीज का प्रयोग उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। विभिन्न सब्जियों के लिए मौसम के अनुसार अनुशंसित बीज की मात्रा तालिका-2 में दी गई है।

बुआई/रोपाई की दूरी

बुआई/रोपाई की दूरी फसल अथवा किस्म एवं मौसम के अनुसार रखी जानी चाहिए। अधिक बढ़ने वाली किस्मों के लिए कम बढ़ने वाली किस्मों की अपेक्षा पौधों तथा कतारों के बीच अधिक दूरी रखने की आवश्कता होती है। अनुशंसित दूरी से कम अथवा अधिक दूरी रखने पर पैदावार पर प्रतिकूल असर पड़ता है।

विभिन्न सब्जियों के लिए मौसम के अनुसार बुआई/रोपाई की अनुशंसित दूरी तालिका-2 में दी गई है।

तालिका-2 : विभिन्न सब्जियों के उत्पादन हेतु अनुशंसित बुआई/रोपाई का समय, उपयुक्त दूरी तथा बीज का मात्रा -

फसल	बुआई/रोपाई	बीज की मात्रा/हे.	बुआई/रोपाई की दूरी (सेमी.)
बैंगन	जुलाई-अगस्त	300-400 ग्रा.	75 X 60
टमाटर	सितम्बर	500-600 ग्रा.	60 X 45

फसल	बुआई/रोपाई	बीज की मात्रा/हे.	बुआई/रोपाई की दूरी (सेमी.)
फूलगोभी	क) अप्रैल-मई	600-700 ग्रा.	45 x 30
	ख) जून-जुलाई	600-650 ग्रा.	45 x 30
	ग) अगस्त-सितम्बर	500-600 ग्रा.	45 x 45
	घ) अक्टूबर-दिसम्बर	350-400 ग्रा.	60 x 45
बंदगोभी	क) सितम्बर-अक्टूबर	500-600 ग्रा.	45 x 30
	ख) नवम्बर-दिसम्बर	400-500 ग्रा.	60 x 45
फ्रांसबीन (झाड़ीदार)	सितम्बर-अक्टूबर	80-100 किग्रा.	40 x 10
फ्रांसबीन (लतीदार)	जून-जुलाई	60-70 किग्रा.	75 x 10
भिण्डी	जून-जुलाई	8-10 किग्रा.	40 x 20
मटर	अक्टूबर-नवम्बर	70-80 किग्रा.	30 x 5
लोबिया	जून-जुलाई	15-20 किग्रा.	40 x 10
प्याज	दिसम्बर-जनवरी	8-10 किग्रा.	20 x 10
मिर्च	अगस्त-सितम्बर	600-700 ग्रा.	45 x 30
शिमला मिर्च	अगस्त-सितम्बर	600-700 ग्रा.	45 x 30
कोंहड़ा	दिसम्बर	6-7 किग्रा.	250 x 125
करेला	दिसम्बर-जनवरी	5-6 किग्रा.	100 x 75
खीरा	दिसम्बर-जनवरी	4-5 किग्रा.	150 x 75
नेनुवा	दिसम्बर-जनवरी	5-6 किग्रा.	150 x 100
तरबूज	दिसम्बर	3-4 किग्रा.	200 x 125
लौकी	दिसम्बर	6-7 किग्रा.	250 x 125

फसल	बुआई/रोपाई	बीज की मात्रा/हे.	बुआई/रोपाई की दूरी (सेमी.)
झींगी	दिसम्बर-जनवरी	5-6 किग्रा.	150 X 75
मूली	अक्टूबर-दिसम्बर	10-12 किग्रा.	30 X 5
गाजर	नवम्बर-दिसम्बर	5-6 किग्रा.	30 X 5
पालक	अक्टूबर/नवम्बर-दिसम्बर	25-30 किग्रा.	30 (लाईनों में)
मैंथी	नवम्बर-दिसम्बर	20-25 किग्रा.	30 (लाईनों में)

उर्वरीकरण

विभिन्न सब्जियों के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता अलग-अलग होती है। भूमि में पर्याप्त मात्रा में जैव पदार्थ उपलब्ध न होने पर यह अत्यन्त आवश्यक है कि उचित मात्रा में गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट (20-25 टन/हे.) का प्रयोग किया जाय। इसके प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है साथ ही उसकी जलधारण क्षमता बढ़ जाती है। खेत में हरी खाद अथवा खल्ली का प्रयोग करने से भी वांछित लाभ होता है। विभिन्न सब्जियों के लिए अनुशंसित उर्वरीकरण हेतु जानकारी तालिका-3 में दी गई है -

तालिका-3 : सब्जियों के लिए अनुशंसित उर्वरक की मात्रा -

फसल	(किग्रा./हे. में)		
	नेत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
बैंगन	120	80	60
टमाटर	120	60	60
फूलगोभी	150	75	50
	175	75	50
	200	100	60
	225	100	60
बंदगोभी	200	80	60
	250	100	60
फ्रांसबीन (झाड़ीदार)	120	50	60
फ्रांसबीन (लतीदार)	75	50	50

फसल	(किग्रा./हे. में)		
	नेत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
भिण्डी	120	80	60
मटर	80	60	60
लोबिया	60	50	50
प्याज	80	60	80
मिर्च	60	50	50
शिमला मिर्च	60	100	50
कोंहड़ा	50	60	50
करेला	50	60	50
खीरा	50	40	40
नेनुवा	50	60	50
तरबूज	80	100	60
लौकी	50	60	50
झींगी	50	60	50
मूली	50	60	50
गाजर	60	50	75
पालक	60	40	40
मैंथी	60	40	40

देख-रेख

नियमित निकाई-गुड़ाई करने से फसल में खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है। इन क्रियाओं के करने से भूमि में वायुसंचार होता है तथा पौधों की उचित वृद्धि होती है। फसल की मांग एवं मौसम के अनुसार नियमित रूप से सिंचाई की व्यवस्था होनी चाहिए।

विकासशील देशों जैसे भारत में कुल सब्जी उत्पादन का 25 प्रतिशत तक तुड़ाई उपरान्त की विभिन्न अवस्थाओं में खराब हो जाता है। जिससे प्रति व्यक्ति सब्जियों की उपलब्धता और भी कम हो जाती है। अनुमान के अनुसार ये हानि सब्जियों की कटाई, परिवहन, भण्डारण, परिरक्षण एवं विक्रय आदि अवस्थाओं के मध्य होते हैं।

तुड़ाई के पश्चात् सब्जियों में आने वाले परिवर्तन :

1. श्वसन : तुड़ाई के पश्चात् भी सब्जियों की श्वसन क्रिया पूर्ववत् चलती रहती है जो समय बीतने के साथ-साथ कम हो जाती है।
2. रंग : कटाई के पश्चात् सब्जियों के रंग में परिवर्तन होना स्वाभाविक है, यह काफी सीमा तक भण्डारण के समय, तापमान एवं नमी पर भी निर्भर करता है।
3. गठन : अधिक तापमान पर सब्जियाँ जल्दी मुलायम होने लगती है ऐसा उनके अन्दर स्थित नमी में कमी आने के कारण होता है।
4. शर्करा एवं कार्बोहाइड्रेड में कमी : सब्जियों में तुड़ाई के पश्चात् शर्करा का कमी आना स्वाभाविक है चूंकि श्वसन क्रिया जारी रहती है।
5. अन्य रासायनिक परिवर्तन : एन्जाइमस, विटामिन तथा वसा की मात्रा में परिवर्त्तन होता है।

कटाई उपरान्त रख-रखाव

सब्जियों की कटाई के समय प्रमुख रूप से दो बातों का विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता होती है :

1. कटाई के समय सब्जी की गुणवत्ता उत्तम होनी चाहिए।
2. कटाई के समय सब्जी अपनी उच्चतम परिपक्वता पर होनी चाहिए।

दूर के बाजारों में भेजने हेतु सब्जियाँ रेल, सड़क, वायु तथा समुद्री मार्गों से भेजी जाती है। जिसमें काफी खर्च आता है। अतः जरूरी है कि उत्पाद अच्छे गुणयुक्त हो अर्थात् वह बीमारी से ग्रसित, चोट लगा हुआ, दाग युक्त नहीं होनी चाहिए। कटाई के समय उचित परिपक्वता का होना भी आवश्यक है।

गुणवत्ता में कमी आने के कारण

उत्पाद में नमी का ह्रास, फफूंदी द्वारा सड़न, बाहरी चोट, अधिक तापमान, आवश्यकता से कम तापमान, अच्छी पैकिंग का अभाव, उठाने एवं रखने में उदासीनता, गन्तव्य स्थान तक पहुँचने में देरी आदि उत्पाद की गुणवत्ता में कमी होने के लिए जिम्मेदार है।

कटाई उपरान्त होने वाली हानि को कम करने हेतु उपाय

1. कटाई उपरान्त सब्जियों को ठंडा करना : अनुसंधानों द्वारा यह बात सिद्ध हो चुकी है कि सब्जियों की कटाई के पश्चात् उन्हें ठंडा करना आवश्यक है। इस क्रिया से उत्पाद की गर्मी को कम कर सकते हैं जिससे परिवहन में होने वाली हानि से काफी सीमा तक बचा जा

सकता है। जहाँ तक संभव हो सब्जियों को सुबह के समय तापमान बढ़ने से पूर्व ही काटा जाना चाहिए।

2. पैकिंग : गन्तव्य की दूरी, परिवहन के प्रकार, सब्जियों द्वारा श्वसन में उत्पन्न तापमान, परिवहन में होने वाली नमी का ह्रास एवं उत्पाद में हानि की संभावना पर पैकिंग की किस्म निर्भर करती है। उदाहरण के लिए लकड़ी के बक्से अच्छी वायु संचार की स्थिति प्रदान कर सकते हैं एवं मजबूती के दृष्टि से उत्तम हैं लेकिल वजनी तथा खर्चीले हो सकते हैं। कार्डबोर्ड इन समस्याओं को देखते हुए उत्तम होगा।

3. पैकिंग स्थान की दशा : पैकिंग कार्य करने का स्थान स्वच्छ एवं हवादार होना चाहिए अन्यथा पानी की मात्रा बढ़ने पर उत्पाद में सड़न पैदा हो सकती है।

4. उत्पाद में नमी के ह्रास को कम करना : नमी बनाये रखने का लाभ सब्जियों के भार पर भी होता है। इस हेतु विभिन्न प्रकार की उपलब्ध पैकिंग सामग्री का उपयोग किया जा सकता है। विभिन्न सब्जियों के भंडारण हेतु अनुशंसित तापमान, प्रतिशत नमी की मात्रा तथा भंडारण की अवधि तालिका-4 में दी गई है।

तालिका-4 : सब्जियों के भंडारण हेतु अनुशंसित तापमान, नमी का दिशा एवं भंडारण की संभावित अवधि

क्र.	सब्जी	भंडारण हेतु तापमान (°फा.)	नमी की दशा (%)	भंडारण समय
1.	पत्तागोभी	32	90-95	3-4 सप्ताह
2.	फूलगोभी	32	90-95	2-3 सप्ताह
3.	बैंगन	45-50	90-95	8-10 दिन
4.	गाजर	32	90-95	4-5 दिन
5.	सेम	45	85-90	8-10 दिन
6.	खीरा	45-50	85-95	10-12 दिन
7.	भिण्डी	50	70-75	10-12 दिन
8.	प्याज	32	70-75	6-8 महीना
9.	मटर	32	85-90	10-12 दिन
10.	आलू	38-40	85-90	6-9 महीना
11.	टमाटर	40-50	85-90	7-10 दिन

प्रायः बहुतायत समय किसान को अपनी उपज कम दामों पर बेचनी पड़ती है। अगर सब्जी परिरक्षण को छोटे पैमाने पर अपनाया जाय तो विभिन्न पदार्थ निर्मित कर उन्हें पूरे साल उपभोग में लाया जा सकता है। साथ ही इस समय होने वाली हानि से बचा जा सकता है। विकसित देशों में कुल उत्पाद का 20 प्रतिशत तक भाग परिरक्षित कर उपभोग में लाया जाता है वहीं भारत में यह मात्र 0.5-2.0 प्रतिशत के मध्य सीमित है। अतः परिरक्षण को कुटीर उद्योग के रूप में अपनाया जाना चाहिए। विभिन्न सब्जियों से निम्न पदार्थ जैसे - जैम, चटनी, अचार, मुरब्बा आदि आसानी से बनाये जा सकते हैं।

सब्जियों को परिरक्षित करने हेतु प्रचलित विधियाँ

खरबूजे का जैम :

खरबूजे के पके फलों को छीलकर टुकड़ों में काट लें। टुकड़ों के वजन के आधार पर 3/4 भाग चीनी डालकर पकायें और जब तापमान 105° सेल्सियस पर पहुँच जाए तो उतार लें। चौड़े मुख वाली बोतलों में भरकर रखें। अधिक दिन तक संरक्षण हेतु 0.02 प्रतिशत सोडियम बेनजोयेट अलग पानी में घोलकर मिलायें। बोतलों को पानी में आधा घण्टा तक उबाल कर प्रयोग में लायें। बाद में मोम से सील करें। अधिक मीठे फलों में 3-4 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. की दर से साइट्रिक एसिड प्रयोग करें।

टमाटर के रस का संरक्षण :

टमाटर के रस को बोतलों में कई सालों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इसके लिए टमाटर के फलों को काटकर एवं गर्म करके रस निकालें। प्राप्त रस को गर्म करें और खौलने से पूर्व उतार लें। स्वाद के लिए संतुलित मात्रा में चीनी एवं नमक का प्रयोग करें। रस को लम्बे समय तक सुरक्षित रखने के लिए सोडियम बेंजोयट नामक परिरक्षी का 0.02 प्रतिशत की दर से प्रयोग करें।

टमाटर कैचप :

पूर्ण पके टमाटर के फलों को धोकर छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लें। थोड़ी देर गर्म करें और रस निकालें एवं अच्छी तरह छान लें। जिससे छिलका एवं बीज न रहे।

कैचअप बनाने के लिए इस प्रकार सामग्री की आवश्यकता होती है - रस 10 ली., प्याज 250 ग्राम, लहसुन 20 ग्राम, लौंग 10 ग्राम, इलाइची 5 ग्राम, बड़ी इलायची 10 ग्राम, दालचीनी 5 ग्राम, लाल मिर्च 5 ग्राम, नमक 100 ग्राम, चीनी 500 ग्राम, सिरका 500 मिली ली., या एसिटिक एसिड 10 मिली.। सभी मसालों को कुचल कर बारीक कपड़े की पोटली बनायें एवं रस में डुबो दें। रस को उबालते रहें एवं आधी चीनी एवं सिरका मिला दें। जब रस गाढ़ा होकर 1/3 हिस्सा रह जाये जो कैचप तैयार हो जाता है। इसमें 0.02 प्रतिशत की दर से सोडियम बेंजाएट अलग से पानी में घोलकर मिलायें तथा बोतलों में भरें। मोम से बोतलों को सील कर दें।

नमक के घोल में सब्जियों का परिरक्षण

गोभी, शलजम, मूली, मटर इत्यादि सब्जियों के परिरक्षण का यह बहुत ही सस्ता एवं सरल तरीका है। मटर के दानों के परिरक्षण हेतु फलियों से दाने निकाल लें। नमक का घोल निम्न प्रकार बनायें। पानी 1 लीटर, नमक 50 ग्राम, पोटाशियम मेटा बाइसल्फाइट 1 ग्राम, ऐसिटिक एसिड 12 मि.ली.। प्रायः सब्जी की दुगनी मात्रा में घोल का व्यवहार होता है। जबकि मटर के परिरक्षण में दानों की बराबर मात्रा में घोल लगता है। चौड़े मुँह की शीशी में सब्जी डालकर घोल को मुँह तक भरें। शीशी के मुँह पर रुई लगाकर ऊपर से मोम की परत डालकर ढक्कन बंद करें। आवश्यकतानुसार सब्जी निकालकर 3-4 घंटा पानी में रख कर धो लें। शीघ्र प्रयोग हेतु गर्म पानी में खर्च आता है। विभिन्न सब्जियों से निर्मित पदार्थों की सूची तालिका-5 में दी जा रही है -

तालिका-5 : विभिन्न सब्जियों से बनाये जाने वाले संरक्षित पदार्थ

क्र.सं.	सब्जी का नाम	निर्मित पदार्थ
1.	टमाटर	जैम, चटनी, प्यूरी, जूस, अचार, डिब्बाबंदी
2.	फुलगोभी	अचार, चटनी, बोतलबंदी
3.	हरी मिर्च	सॉस, अचार
4.	अदरक	जिंजरेल, मुरब्बा, कैंडी, अचार, चटनी, जिंजर, टॉनिक
5.	लहसुन	सॉस, अचार
6.	प्याज	सिरकायुक्त अचार
7.	लाल मिर्च	अचार
8.	मटर	अचार, बोतलबंदी
9.	करेला	अचार, सुखाना, बोतलबंदी
10.	ओल	अचार, चटनी
11.	शलजम	अचार
12.	परवल	केंडी, मुरब्बा, बोतलबंदी
13.	खीरा	अचार, बोतलबंदी
14.	ककड़ी	अचार, बोतलबंदी
15.	गाजर	मुरब्बा, हलवा, अचार, बोतलबंदी
16.	पेठा	मुरब्बा, कैंडी
17.	लौकी	बरफी, कैंडी, चटनी

औषधीय एवं सगंधीय पौधे

अश्वगंधा

अश्वगंधा एक बहुमूल्य औषधीय पौधा है, जिसकी मोटी एवं मूसलाधार जड़ो का उपयोग किया जाता है। इसकी जड़ों में निकोटिन, सोमनीफेरीन, सोमनीविदानीन, विदानीनाइन आदि एलकोलाईड पाये जाते हैं।

यह एक छोटा (लगभग 2-3 फीट का) पौधा होता है। तने रोयेंदार, हल्के हरे तथा जड़ें मोटी एवं मूसलाधार होती है। यह बलवर्धक है। गठिया के दर्द, जोड़ों की सूजन, पक्षाघात, रक्तचाप, स्त्री रोग एवं स्नायु रोग के उपचार में इसे काम में लाया जाता है। इसकी पत्तियाँ मोटापा कम करने, त्वचा रोग, सूजन एवं घावों को भरने के काम में आती है। झारखण्ड में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

मिट्टी एवं जलवायु :

अश्वगंधा एक पिछात बरसात की फसल है। इसके लिए सूखा मौसम होना चाहिए तथा जाड़े में एक दो पानी होने से जड़ो का विकास अच्छा होता है। बलूई दोमट मिट्टी, जिसका पीएच 7.0-8.0 हो, में जड़ो का विकास बढ़िया होता है।

खेत की तैयारी, बीज दर एवं बुआई :

गर्मी के मौसम में खेत की जुताई दो बार करें। बीज की बुआई जुलाई के प्रथम सप्ताह से अगस्त के प्रथम सप्ताह तक करें। बीजों की जोते हुए खेतों में छींटकर या पंक्तियों में बुआई की जाती है। अंतिम जुताई में गोबर की सड़ी खाद मिला दें। ऊपरी जमीन में गर्मियों में जुताई के समय चूना दें। एक हेक्टेयर खेत के लिए 5-7 किलो बीज की आवश्यकता होती है। बोआई के 15-20 दिन बाद बीजों का अंकुरण होता है। अंकुरण के 10-15 दिन बाद पौधों को थिरलीकरण करें।

निकाई-गुड़ाई एवं सिंचाई :

एकाध निकाई-गुड़ाई करने से जड़े अच्छी बढ़ती है। साधारणतः इसमें सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती।

फसल कटाई :

जुलाई में बोई गई फसल नवम्बर में फूलने लगती है। जड़ें 150-180 दिन पर उखाड़ने लायक हो जाती है। जड़ों को एकत्र करने के लिए पौधों को जड़ों सहित उखाड़ लें और अच्छी तरह साफ कर 8-10 सेमी. के टुकड़ों में काट लें एवं सुखा लें। ज्यादा व्यास वाली अच्छी एवं कम व्यास वाली निम्न कोटि की मानी जाती है।

बीमारियाँ एवं उपचार

बीज गलन : बीज बोने के बाद पानी पड़ जाने से बीज गलन हो जाता है। बीजों को डायथेन एम-45 से उपचारित करें।

पत्र गलन : इन्डोफिल एम 45 का 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

उपज एवं आर्थिक लाभ

उपज	:	10-12 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सूखी जड़
बिक्री दर	:	50-60 रुपये प्रति किलो
कुल आय	:	50000-70000 रुपये प्रति हेक्टेयर
कुल खर्च	:	25000-30000 रुपये प्रति हेक्टेयर
शुद्ध लाभ	:	25000-40000 रुपये प्रति हेक्टेयर

ब्राह्मी

औषधीय पौधों में ब्राह्मी का एक प्रमुख स्थान है। चरक-संहिता एवं आर्युवेद में यह बहुत पहले से ही दमा, जोड़ों का दर्द, मानसिक शक्ति बढ़ाने, याददाश्त, बुखार एवं अन्य बीमारियों में उपयोग किया जाता है। इसे ज्यादातर जंगलो से ही इकट्ठा किया जाता है, जिसमें भिन्नता पाई जाती है। हाल के वर्षो में इसकी मांग बढ़ने के कारण इसकी खेती पर ध्यान दिया जाने लगा है। झारखंड के विभिन्न इलाकों में इसे सफलतापूर्वक लगाया जा सकता है। इसके पूरे पौधों का उपयोग किया जाता है। बाजार में इसके सूखे पौधों की कीमत 100 रुपये किलो मिल जाती है। इसमें बीकोसाईड-ए पाया जाता है।

मिट्टी

ब्राह्मी कई तरह की मिट्टियों में उगाया जा सकता है। नमी वाले खेतों में भी इसे सफलतापूर्वक उगाते हैं। कम उपजाऊ वाले क्षेत्रों में बरसात में इसकी खेती की जा सकती है।

खेत की तैयारी

खेतों की अच्छी तरह जुताई कर घास-पात हटा दें। गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर 100 क्विंटल की दर से देकर मिला दें। पौधों को लगाने से पहले खेतों को पटा देने से पौधे अच्छी तरह लग जाते हैं।

पौधों को लगाना

पौधों के 4-5 सेंटीमीटर के टुकड़े, जिसमें कई गाठे हों, लगाने के लिए उपयुक्त है। पोधे से पौधे की दूरी 30-40 सेंटीमीटर तथा पंक्ति की दूरी 40-45 सेंटीमीटर होनी

चाहिए। पौधों को लगाने के बाद पटा देना चाहिए। बाद में प्रत्येक सप्ताह एक बाद पानी दें।

निकाई-गुड़ाई

पौधों को लगाने के बाद खेत में प्रथम निकाई-गुड़ाई 20 दिनों पर करें। जब पौधे अच्छी तरह फैल जाते हैं तब निकाई-गुड़ाई की जरूरत नहीं रहती है। सिर्फ कुछ बड़े घास की रह जाते हैं, जिन्हे बाद में निकाला जा सकता है।

पौधा संरक्षण

पत्तियाँ खाने वाले कीड़ों का आक्रमण होने पर नुबान या डेमोक्रोन के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

पौधों की कटाई

मार्च-अप्रैल के महीने में लगाने पर गर्मी में पौधों का बढ़ाव अधिक होता है और जून के महीने में काटने लायक हो जाता है। बरसात के समय लगाने से प्रथम कटाई अक्तूबर-नवम्बर में होती है। बाद में कटाई करने से बेकोसाईड की मात्रा घट जाती है। पौधों को काटते समय जड़ से 5 सेंटीमीटर ऊपर काटा जाता है ताकि फिर नये पौधे निकल सकें।

कटाई उपरांत प्रबंधन

पोधों को कटाई के बाद छाया में सुखाना चाहिए। सुखाने के लिए ड्रायर में आधे घंटे तक 80° सेंटीग्रेड पर रखें फिर बाद में छाया में सुखाएं। अच्छी तरह सुखाए गए पौधों को सील बन्द पैकेटों में रखे ताकि कीड़े एवं फफूंद न लगे।

उपज

तुरंत काटे गये पौधों की मात्रा 300-325 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। जिसे सुखाने पर 60-65 क्विंटल सूखा हुआ पौधा मिलता है। रतून पौधों की कटाई से 40 क्विंटल सूखा हुआ पौधा मिलता है। इस तरह कुल उपज 100-150 क्विंटल तक हो जाती है।

विभिन्न मदों में खर्च प्रति हेक्टेयर

खेत की जुताई, पाटा देना एवं क्यारी बनाना ..... 2500 रुपये

कम्पोस्ट एवं नीम खली ..... 4000 रुपये

पौधे की कटिंग एवं रोपाई ..... 10000 रुपये

सिंचाई (लगाने से पहले एवं बाद में) ..... 6000 रुपये

निकाई-गुड़ाई (3 बार) ..... 4500 रुपये

कटाई (2 बार) ..... 3000 रुपये

सुखाना एवं पैकिंग ..... 10000 रुपये

पौधा संरक्षण ..... 1000 रुपये

अन्य ..... 4000 रुपये

कुल खर्च ..... 45000 रुपये

सर्पगंधा

सर्पगंधा या छोटी चाँद, जिसे अंग्रेजी में राउल्फिया सर्पन्टाईना कहते हैं, एपोकाईनेसी कुल का पौधा है। यह झाड़ीदार पौधा है पर इस कुल के कुछ पौधे पेड़ों की तरह हो जाते हैं। इस पौधे की जड़ से सरपेन्टाइन नामक दवा निकाली जाती है। इसकी जड़ें मूसलदार होती है और जमीन के अन्दर से सर्पन्टाइन के अलावे रेस्पेरीन, अजमेलील, सेशाजेमलीन एवं रोलूम्बीन भी निकाले जाते हैं।

औषधीय उपयोग :

यहाँ की पुरानी पुस्तकों में इस पौधे का वर्णन आता है। यह रक्तचाप, स्त्रीरोग, पागलपन दूर करने, निद्रा लाने, साँप काटने, दस्त, पेचिस, हैजा, सिरदर्द एवं नेत्र रोग में काम आता है। गांवों में औरतें इस पौधे का उपयोग बच्चों को सुलाने में भी करती है। हाल के वर्षो में इस पौधे की जड़ की मांग देश के अंदर एवं विदेशों में काफी बढ़ गई है।

जलवायु

हमारे देश के प्रायः सभी भागों जैसे - आसाम, मेघालय, शिमला, देहरादून, सिक्कम, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, बिहार एवं झारखंड में यह पौधा पाया जाता है। इसे नम गर्म जलवायु तथा खुले या बगानों में भी उगाया जा सकता है।

मिट्टी

सर्पगंधा की जड़ों की समुचित वृद्धि के लिए दोमट या बलूई मिट्टी अच्छी है। चिकनी मिट्टी में इसकी जड़ें नहीं बढ़ती। मिट्टी हल्की आम्लिक से हल्की क्षारीय होनी चाहिए।

प्रसारण एवं बीज दर

छोटी चाँद का प्रसारण बीजों, तने या जड़ों की कलमों द्वारा किया जाता है। बीजों को तैयार होने पर पौधशाला में वर्षा शुरु होने पर मई-जून महीने में बोया जाता हे। इसी तरह से जून के महीने में तने 15-20 सेंटीमीटर के टुकड़े काटकर पौधशाला में लगाये जाते हैं। जड़ें आने पर खेतों में लगाते हैं। जड़ की भी 3-5 सेंटीमीटर कलम काटकर एक सेंटीमीटर छोड़कर गड्ढे में लगाकर ढंक दिया जाता है। 3 सप्ताह बाद कल्ले निकलने पर खेतों मं लगाया जाता है। बीज दर प्रति हेक्टेयर 15 किलोग्राम तथा तने की कलमें प्रतिहेक्टेयर 100 किलो होगी। बीजों को बोने के पहले 24 घंटे फुला लें। नर्सरी में 25-30 सेंटीमीटर की दूरी पर 2 सेंटीमीटर गहरे कुँड में 2.5 सेंटीमीटर की दूरी पर गिराएँ। बिचड़े दो महीने में तैयार हो जाते हैं।

खेत की तैयारी, रोपाई एवं खाद की मात्रा

इसकी खेती के लिए मई महीने में खेत को जोत दें। वर्षा होने पर गोबर की सड़ी खाद 100 क्विंटल प्रति हेक्टेयर देकर मिला लें। साथ ही लगाते समय 45 किलो नाईट्रोजन, 45 किलो फासफोरस तथा 25 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर दें। नाईट्रोजन की यही मात्रा (45 किलो) दो बार अक्तूबर एवं मार्च में दें। बिचड़े 10-12 सेन्टीमीटर के होने पर लगाने लायक हो जाते हैं। बीजों से तैयार बिचड़े या कलमों को 45ग30 सेमी. या 35ग35 सेमी. की दूरी पर लगाकर पटा दें। पानी की कमी होने पर समय-समय पर पटा दें।

निकाई-गुड़ाई

पौधों को लगाने के बाद खरीफ में दो बार तथा फिर जाड़े में एक बार खरपतवार निकाल दें। सिंचाई की सुविधा होने पर सिंचाई करें।

कटाई एवं उपज

सर्पगंधा डेढ़-दो साल का होने पर उखाड़ा जाता है। उस समय मूल जड़ 0.5 से 1.0 मीटर जमीन के नीचे चला जाता है। इसे उखाड़ने का सबसे अच्छा समय जाड़े का है। उस समय जड़ों में एल्केलाईड की मात्रा ज्यादा रहती है। जड़ों को छोड़ देने से ढ़ाई साल पर उपज ज्यादा मिलती है। पौधों की जड़ों को उखाड़कर 12-15 सेमी. के टुकड़े कर सुखा लें तथा वायुरिक्त ड्रमों में रखें।

उपज : 1000 किलो (डेढ़ साल में)
2000 किलो (ढ़ाई साल में)

बिक्री दर	:	70/- रुपये प्रति किलो
कुल आमदनी	:	25000-40000/- रुपये प्रति हेक्टेयर
लाभ	:	45000-100000/- रुपये प्रति हेक्टेयर

इसके अलावे 5-15 किलो बीज भी मिल जाते हैं तथा पौधे की कटिंग भी तैयार हो जाती है।

रजनीगंधा

व्यावसायिक तौर पर उगाये जाने वाले फूलों की फसलों में रजनीगंधा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके फूल सफेद और सुगंधित होते हैं, जो मन को मुग्ध कर लेते हैं। रजनीगंधा के कटे फूल (डंठलयुक्त फूल या फ्लावर), गुलदस्ता बनाने, मेज, इन्टेरियर (भीतरी) पुष्प सज्जा के लिए मुख्य रूप से प्रयोग किये जाते हैं। इसके अलावा बिना डंठल के पुष्प का गजरा और वेणी बनाने तथा सुगंधित तेल तैयार करने के लिए उपयोग किया जाता है। फूलों की बढ़ती मांग एवं व्यवसाय के कारण छोटानागपुर के पठारी भाग में भी रजनीगंधा की खेती की जाने लगी है। रजनीगंधा की सफल खेती के लिए यह क्षेत्र उपयुक्त जलवायु प्रदान करता है। अतः उत्पादकों को इसकी खेती से सम्बंध कुछ वैज्ञानिक जानकारी भी आवश्यक है।

भूमि एवं खेती की तैयारी

रजनीगंधा की फसल को हर तरह की मिट्टी में उगाया जा सकता है, परन्तु बलुई दोमट या सिल्टी दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। यह ध्यान देना आवश्यक है कि खेत छायादार जगह न हो अर्थात् जहाँ सूर्य का पूर्णरूपेण प्रकाश मिलता हो तथा जल निकास का उचित प्रबंध हो, वहीं इसकी खेती की जाय। खेत का चुनाव करने के बाद उसे एक बार मिट्टी पलटनेवाले हल से तथा 2-3 बार देशी हल से जुताई करके पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी बना दें तथा समतल कर दें। चूंकि, यह कन्द वाली फसल है इसलिए कन्द के समुचित विकास के लिए खेती की तैयारी ठीक ढंग से होनी चाहिए। अंतिम जुताई के समय ही खेत में कम्पोस्ट या गोबर की अच्छी सड़ी खाद मिला देते हैं।

किस्मों का चुनाव

फूल के आकार प्रकार तथा बनावट के अनुसार रजनीगंधा की किस्मों को चार वर्गों में बांटा गया है - (1) सिंगल-सफेद रंग के फूल एवं पंखुड़ियों की केवल एक

पंक्ति, (2) डबल-सफेद फूल, पंखुड़ियाँ कई पंक्तियों में तथा सिरा हल्का गुलाबी, (3) हाफ डबल या अर्ध डबल-सफेद रंग एवं पंखुड़ियों की 2-4 पंक्ति, (4) वेरीगेटेड-पंखुडियों क एक पंक्ति परन्तु पत्तियों के आकर्षक रंग एवं विभिन्नता के कारण दो प्रकार - स्वर्ण रेखा, रजत रेखा।

सिंगल किस्म के फूल लगभग सभी मौसम में पूर्णतः खिल जाते हैं और इसके फूल सुगंधित होते हैं। सिंगल किस्म के फूलों के नाम उगाये जाने वाले जगहों के नाम पर रखे गये हैं, जैसे कलकत्ता सिंगल, कोयम्बतूर सिंगल, बंगलोर सिंगल, मेक्सिकन सिंगल इत्यादि। इसके अलावा एक किस्म है सुहासनी। डबल में जो किस्में उपलब्ध हैं उनमें ''हर श्रृंगार'' मुख्य हैं।

कन्दों की रोपाई

छोटानागपुर के पठारी भागों में रजनीगंधा के कंद रोपने का उपयुक्त समय अप्रैल-मई है, किन्तु सिंचाई की व्यवस्था न होने पर जून-जुलाई में भी कन्दों की रोपाई की जा सकती है। 2 सेमी. व्यास या इससे बड़े आकार वाले कन्द का चुनाव रोपाई के लिए करना चाहिए। किस्म तथा फसल की अवधि (एक, दो या तीन वर्ष) के अनुसार 1-3 कन्दों को प्रत्येक स्थान पर लगाना चाहिए। सिंगल रजनीगंधा फूल के किस्म को यदि केवल एक वर्ष के लिए लगाना है, तो प्रत्येक स्थान पर तीन कन्दों की रोपाई करें, इससे उपज अधिक प्राप्त होती है। परन्तु एक वर्ष से ज्यादा समय की फसल लेनी हो तो 1-2 कन्दों की रोपाई प्रति स्थान करें। डबल किस्म के कन्द की एक वर्ष के लिए रोपाई प्रतिस्थान दो कन्द तथा एक वर्ष से अधिक के समय के लिए एक कन्द की रोपाई करें। सिंगल किस्मों के कन्द फसल को अवधि के अनुसार 15-30 x 15-30 सेमी (पंक्ति एवं पौधा) की दूरी पर, जबकि डबल किस्म के कन्दों को 20x20 सेमी. या 25x25 सेमी. (पंक्ति एंव पौधा) पर रोपाई करना उत्तम होता है। कन्दों को लगभग 5 सेमी. की गहराई पर रोपना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

इसकी खेती के लिए खाद एवं उर्वरक की भरपूर मात्रा में आवश्यकता पड़ती है। खाद एवं उर्वरक में 250-300 क्विंटल कम्पोस्ट या गोबर की अच्छी सड़ी खाद के अलावे 100-120 किग्रा. नाइट्रोजन (225-250 किग्रा. यूरिया), 80-100 किग्रा. फास्फोरस (350-450 किग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 80-100 किग्रा. पोटैशियम (120-150 किग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) की मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से खेती में डालना चाहिए। नाइट्रोजन की मात्रा को तीन बार (30, 60, एवं 90-100 दिन पर) किस्तों में डालना चाहिए, जबकि कम्पोस्ट, फास्फोरस एवं पोटैशियम की पूरी मात्रा के कन्द रोपने के समय ही देना चाहिए।

सिंचाई एवं निराई-गुड़ाई

कन्द रोपने के बाद जमीन में पर्याप्त नमी आवश्यक है। बरसात के मौसम में नमी नहीं रहने पर, जबकि गर्मी में 4-6 दिन के अन्तर पर एवं शरद ऋतु में 7-8 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। सही मात्रा में एवं सही समय पर सिंचाई करने से फूल की उपज में संतोषजनक वृद्धि होती है। खेत में खरपतवार दिखाई देते ही निराई-गुड़ाई करनी चाहिए, इससे मिट्टी ढीली होती है तथा कन्द एवं जड़ो का विकास सही होता है।

फूल/स्पाइक की तुड़ाई

कन्द रोपने के 60-70 दिन बाद स्पाइक निकलना प्रारंभ हो जाता है। स्पाइक निकालने के बाद से फूल खिलने में लगभग 25-30 दिन लगते हैं। प्रत्येक कन्द से 1-3 स्पाइक तक प्राप्त होते हैं। स्पाइक 90-120 सेमी. लंबे तथा 20-25 फूलों वाले होते हैं। डबल किस्म के स्पाइक लगभग 75-100 सेमी. लंबे होते हैं जिससे 40-50 तक फूल प्राप्त होते हैं। अतः व्यावसायिक उत्पादन के लिए सिंगल किस्म अधिक उपयुक्त होते हैं।

फल एवं सब्जियों के तुड़ाई उपरान्त उचित देखभाल एवं परिरक्षण के द्वारा मूल्यवर्धन

हमारे देश में फल एवं सब्जी का उत्पादन प्रति वर्ष क्रमशः 50 मिलियन टन एवं 94 मिलियन टन हो रहा है, जो पूरे विश्व में दूसरे स्थान पर है। यदि उपलब्ध आंकड़ो पर ध्यान दें तो प्रतिवर्ष कुल उत्पाद की लगभग 37 प्रतिशत भाग विभिन्न कारणों जैसे तुड़ाई उपरान्त उचित देखभाल का न होना, भंडारण की समस्या, उपभोक्ताओं तक समय से न पहुँच पाना आदि से खराब हो जाता है (सारणी-1)। जिसका औसत मूल्य लगभग 25,000 करोड़ अनुमानित है।

सारणी-1 : फलों एवं सब्जियों में तोड़ाई उपरान्त नुकसान

फल	नुकसान (प्रतिशत)	सब्जी	नुकसान (प्रतिशत)
सेव	14	पत्तागोभी	37
केला	20-80	फुलगोभी	49
अंगूर	27	प्याज	16-35
नीबू	20-85	टमाटर	5-50
संतरा	20-95	आलू	5-40
पपीता	40-100		

स्रोत : आर.के. मीना एवं जे.एस. यादव (2001) *हार्टीकल्चर माक्रेटिंग एवं पोस्ट हार्वेस्ट मैनेजमेन्ट*, पायनियर प्रकाशक, जयपुर

झारखण्ड प्रदेश में सब्जियों जैसे मटर, टमाटर, फुलगोभी, फ्रांसबीन, शिमला मिर्च का अच्छा उत्पादन हो रहा है। करीब-करीब पूरे वर्ष इन सब्जियों की उपलब्धता बनी रहती है। इसी तरह फलों में आम, लीची, अमरूद, केला, पपीता, नीबू एवं कटहल की अच्छी उपज होती है। राष्ट्रीय स्तर पर अगर उत्पादकता देखी जाय तो आम, लीची, केला आदि की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता सबसे अधिक है।

फलों एवं सब्जियों को बाजार में भेजने से पहले मूल्यवर्द्धन के मुख्य बिन्दु

- ❖ उपभोक्ता हमेशा ऐसी ताजा, मुलायम, कीड़े एवं बीमारी रहित सब्जियों एवं फलों को पसन्द करता है जो देखने में अच्छा लगता है।
- ❖ कोमल अवस्था पर जब पूर्ण विकास हो जाय तभी तुड़ाई करनी चाहिए।

- ❖ जड़ वाली सब्जियों जैसे मूली, गाजर को देर में उखाड़ने से जड़ में खोखलापन आ जाता है। यदि प्याज एवं लहसुन को देर तक खेत में छोड़ दिया जाय तो भंडारण में इनकी गुणवत्ता प्रभावित होती है।
- ❖ सुबह या शाम जब मौसम ठंढा हो तभी तुड़ाई का कार्य करना चाहिए।
- ❖ पत्तेदार एवं फल वाली सब्जियों की तुड़ाई जहाँ तक संभव हो चाकू से करना चाहिए।
- ❖ बाजार में भेजने से पहले उत्पाद को साफ पानी से धोकर छटाई करना बहुत आवश्यक है।
- ❖ सब्जियों एवं फलों को उचित आकार के डिब्बों, टोकरी, दफ्ती के डब्बों पर रखकर भेजने से बाजार में मूल्य अधिक मिलता है। जैसे यदि उपलब्ध टमाटर, आम, अमरूद को श्रेणीकरण करके लकड़ी के डिब्बों में बंद करके बाजार में भेजा जाय तो मूल्य अधिक मिलेगा। ऐसा पाया गया है कि अभी भी बहुत से फलों एवं सब्जियों को जूट के बोरों, बाँस की टोकरी, कागज के गत्तों आदि में रखकर बाजार में भेजा जाता है। इनसे गुणवत्ता तो प्रभावित होती ही है साथ ही साथ उचित मूल्य भी नहीं मिलता है।

यदि मौसम विशेष में अधिक फल एवं सब्जी की उपलब्धता हो तो 'परिरक्षण विधि' के द्वारा बेमौसम में भी इनकी उपलब्धता बढ़ाई जा सकती हैं। परिरक्षण का अर्थ है फलों एवं सब्जियों को विशेष उपचारित के माध्यम से लम्बे समय तक सुरक्षित रखना एवं तैयार उत्पादों को ऐसे समय में प्रयोग में लाना जब उनकी उपलब्धता न हो। इस प्रक्रिया में महिलाओं को जोड़कर अधिक रोजगार का सृजन किया जा सकता है (सारणी-2)।

सारणी-2 : झारखण्ड में उपलब्ध फलों एवं सब्जियों से तैयार होने वाले प्रमुख परिरक्षित उत्पाद -

फल/सब्जी	तैयार होने वाले परिरक्षित पदार्थ
आम	शर्बत, नेक्टर, स्क्वैश, मुरब्बा, अचार, चटनी
अमरूद	जैली, स्क्वैश, टाफी, नेक्टर, शर्बत
आँवला	मुरब्बा, जैम, कैण्डी, स्क्वैश, अचार, चटनी, त्रिफला, च्यवनप्राश
लीची	जूस, नेक्टर, स्क्वैश, सीरप, डिब्बाबंद लीची, लीची नट
पपीता	जैम, कैण्डी, नेक्टर, आचार, पपेन
केला	सूखा केला (चिप्स) टॉफी

नीबू	जूस, शर्बत, आचार
टमाटर	सॉस, चटनी, टयूरी, पेस्ट, जूस, सूप, टमाटर पाउडर
फूलगोभी	अचार, सूखागोभी, डिब्बाबंद गोभी
गाजर	जैम, आचार, मुरब्बा, कैंडी
मटर	डिब्बाबंद मटर, बोतल में बंद मटर, सूखा मटर, मिश्रित अचार
परवल	डिब्बाबंद परवल, परवल की मिठाई
फ्रेंचबीन	आचार, डिब्बाबंद फ्रेंचबीन के टुकड़े
मशरूम	आचार, डिब्बाबंद मशरूम, सूखा मशरूम

परिरक्षण के सिद्धांत

फल एवं सब्जियों में 70-95 प्रतिशत तक नमी पायी जाती है। परिरक्षित पदार्थ बनाते समय इस बात का विशेष ध्यान दिया जाता है कि तैयार पदार्थ में नमी की मात्रा इस प्रकार नियंत्रित की जाय की उत्पाद जल्दी खराब न हों। मुख्यतः इस प्रक्रिया में तीन सिद्धांतों का पालन किया जाता है।

क. सूक्ष्म जीवों द्वारा सड़ने से बचाना :

- सूक्ष्म जीवों का आक्रमण न होने देना।
- सूक्ष्म जीवों को हटाना /छानना।
- सूक्ष्म जीवों के विकास को रोक देना।
- सूक्ष्म जीवों को मारना।

ख. पदार्थों को अपने आप में ही सड़ने से बचाना

- पदार्थों के अन्दर होने वाले एन्जाइम की क्रियाशीलता को रोकना (ब्लांचिंग)।
- पदार्थों के अन्दर होने वाले रासायनिक क्रियाओं को बंद करना अथवा देर तक रोक कर रखना (चीनी, तेल, सिरका, नमक, मसाला)

ग. पदार्थों को कीड़े, फफूंदों एवं यांत्रिक क्षति से बचाव

- पदार्थों को फफूंदों को आक्रमण से बचाना।
- सूखे पदार्थों को धूल /पतंगो से बचाना।
- पदार्थों या उससे डिब्बों /बोतलों को नुकसान से बचाना

फल एवं सब्जी परिरक्षण के लाभ

- फल एवं सब्जी परिरक्षण एवं विज्ञान के साथ-साथ एक कला भी है।

इस विधि से उनेक उपयोगी पदार्थ तैयार करके उनका मूल्य वर्धन भी किया जाता है। जिससे अधिक आमदनी प्राप्त होती है।

- विभिन्न फलों एवं सब्जियों की उपलब्धता एक निश्चित समय विशेष पर होती है। शीत गृहों में भंडारण के फलस्वरूप कुछ अधिक समय तक इनकी उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है। परिरक्षण के द्वारा पूरे वर्ष उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है।
- फलों एवं सब्जियों को सड़ने तथा नुकसान होने से बचाया जा सकता है।
- हमारे देश में आधी जनसंख्या महिलाओं की है। प्राचीन काल से ही इनका योगदान अनाज, फल-फूल, सब्जियाँ उगाने तथा संरक्षण में सराहनीय रहा है। स्थानीय एवं सामूहिक स्तर पर महिलाओं को परिरक्षण से जोड़ने पर उनकी आमदनी बढ़ाई जा सकती है।
- फल एवं सब्जी परिरक्षण द्वारा कम उद्भोगी पदार्थ से भी अधिक मूल्य सम्बंधित पदार्थ तैयार किये जा सकते हैं।

फल एवं सब्जी परिरक्षण की विधियाँ

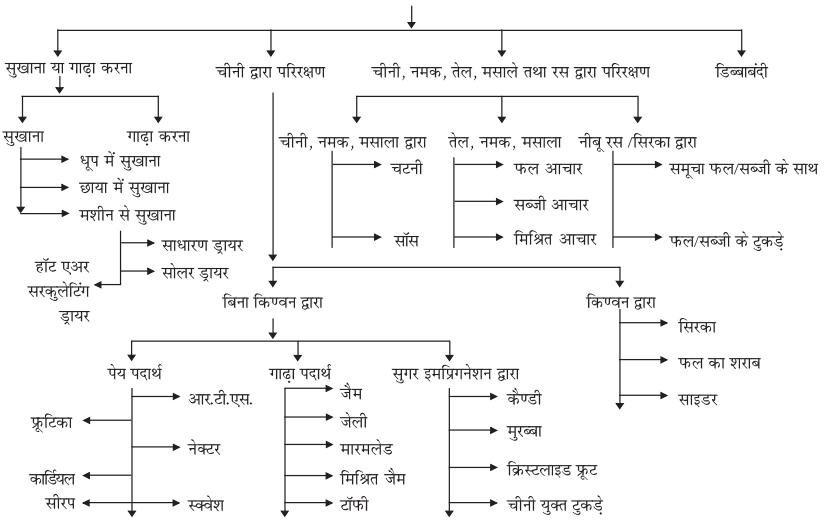

सब्जियों में समेकित रोग प्रबंधन

झारखण्ड में अधिकांश जमीन ढालू एवं पठारी है। यहाँ कि जलवायु समशीतोष्ण होने के कारण यहाँ पर सालों भर सब्जियों की खेती होती है। इस प्रदेश में राँची, हजारीबाग, लोहरदगा, गढ़वा, संथालपरगना एवं सिंहभूम जिलों में सब्जियों की खेती अपना विशेष स्थान बनाये हुए है। यहाँ पर टमाटर, बैंगन, खीरा, शिमलामिर्च, मटर, गोभी, प्याज, फ्रेंचबीन, आदि की खेती बड़े पैमाने पर सफलतापूर्वक की जाती है। सब्जियों की खेती में कई तरह की समस्याऐं जैसे कीड़ों तथा रोगों के प्रकोप के फलस्वरूप 10-30 प्रतिशत हानि होती है तथा कभी-कभी शत प्रतिशत फसल इनसे बर्बाद हो जाते हैं। उग्ररूप धारण कर लेने पर रोगों पर नियंत्रण पाना कठिन होता है। वहीं पैदावार व गुणवत्ता पर कुप्रभाव पड़ता है। बैंगन की फोमोप्सिस एवं अंगमारी तथा मिर्च एवं सेम वर्गीय फसलों में एन्थ्रेकनोज घातक बिमारियाँ हैं जो बीज को संक्रमित कर अगली फसल को भी हानि पहुँचाती है। अतः यह आवश्यक है कि इनका निदान उचित समय पर किया जाय। अनुशंसित मात्रा से कम रसायनों का प्रयोग जहाँ रोगों में प्रतिरोधक क्षमता पैदा करता है वहीं अधिक मात्रा में इनका प्रयोग फसल एवं मनुष्यों में विभिन्न विकार पैदा करता है। अतः कीटनाशक अथवा रोगनाशक दवाओं का प्रयोग करते समय पूरी सावधानी बरती जानी चाहिए। इसलिए इन व्याधियों से राहत पाने के लिए समेकित प्रबंधन की आवश्यकता है जो इस प्रकार है -

1. प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग।
2. अगेती रोपाई।
3. व्यवहारिक नियंत्रण (क्लचरल कन्ट्रोल) - गर्मी के मौसम में खेत की जुताई।
4. पलवार (मल्चिंग) द्वारा खरतपवार को नष्ट करना तथा खेत की नमी बनाये रखना।
5. उचित समय पर पानी का प्रयोग तथा अत्याधिक पानी के उचित निकास का प्रबंध करना।
6. जैविक पोषक तत्वों का समुचित मात्रा में प्रयोग करना।
7. खेत में करंज या नीम की खल्ली का प्रयोग करना।
8. वनस्पतिक पदार्थों जैसे नीम, तुलसी, पुटुस (लेनटाना), करंज, सरसों इत्यादि की पत्तियों के घोल के प्रयोग से बीमारी एवं कीड़ों की समस्याओं को कम करना।
9. अनुशंसित फसल चक्र अपनाना।

10. रोग ग्रस्त पत्तियों को इकट्ठा कर जला देना या जमीन में गाड़ देना।

11. भूमि शोधन करना।

12. जैविक फफूंदी नाशक जैसे ट्राईकोडर्मा, संजीवनी, कालीसेना एवं जैविक कीटनाशक जैसे बी.टी. एन.वी.भी. का प्रयोग।

विभिन्न प्रकार के सब्जियों की रोगों के लक्षणों की जानकारी आवश्यक है जो इस प्रकार हैं तथा इनके रोकथाम के उपाय तालिका-1 में प्रदर्शित हैं।

पादगलन या आर्द्रगलन (डैम्पिंग ऑफ)

यह टमाटर, गोभी, मिर्च, मूली, गाजर, शलजम, के नर्सरी में लगने वाले एक मृदाजनित फफूंद जैसे पीथियम तथा राइजोक्टानिया से होता है। इसके लक्षण दो अवस्थाओं में पाये जाते हैं। पहली अवस्था में अंकुरित बीजों का जमीन की सतह से निकलने के पूर्व ही पौधा गल जाता तथा दूसरी अवस्था में बीज अंकुरण के 15 से 20 दिनों के अन्दर जमीन की सतह से पौधों का गलना मुख्य लक्षण है।

पाउडरी मिल्ड्यु (चुर्णिल आसिता)

यह रोग कद्दुवर्गीय सब्जियाँ जैसे (खीरा, लौकी, करैला) पत्तागोभी, फूलगोभी, मूली, शलजम, मटर, भिण्डी, फ्रेंचबीन, बोदी, सेम, टमाटर, मिर्च, बैंगन, प्याज पर मुख्य रूप से पाया जाता है। इसके लक्षण में सफेद मटमैले पाउडरनुमा फफूंद का पत्तों तथा पत्रवृन्तों या फलों पर उपस्थित होना मुख्य है।

रोग प्रतिरोधी किस्में जैसे - मटर के अर्का अजीत, सी.एच.पी.एम.आर.-1, सी.एच.पी.एम.आर.-2, डी.पी.पी.-9411, डी.पी.पी.-9414, जे.पी.-72 एवं खीरा के स्वर्णपूर्णा, स्वर्ण अगेती झारखण्ड के लिए उपयुक्त है।

डाउनी मिल्ड्यु (मृदु रोमिल आसिता)

यह कद्दू वर्गीय सब्जियों, गोभी परिवार के पौधा तथा पौधशाला के नवजात बिचड़ों या खेत में बड़े पौधों के पत्तियों की निचली सतह पर कपास की तरह सफेद मटमैले रंग के फफूंद का आक्रमण, पत्तों की ऊपरी सतह पर काले पीले धब्बों का अनगिनत समूह होता है।

मुरझा रोग

यह एक जीवाणुजनित रोग है जो सोलनेसी परिवार की सब्जियों जैसे टमाटर, बैंगन, मिर्च एवं आलू में लगता है। इनके जीवाणु मृदा में रहते हैं। इसका प्रकोप गर्मी, बरसात में ज्यादा तथा जाड़े के मौसम में कम होता है। इसका मुख्य लक्षण फूलने के

समय पौधे का अचानक मुरझाकर सूख जाना है। जिससे काफी नुकसान होता है। इसकी पहचान आसानी से तने के कटे भाग से दूधनुमा स्राव को पानी में (उज टेस्ट) देखकर की जा सकती है।

रोग प्रतिरोधी किस्मों से उत्पादन : टमाटर की स्वर्ण लालिमा, स्वर्ण नवीन, अर्का आभा, अर्का आलोक, अर्का वरदान, बी.टी.-17, शक्ति (एल.ई.-79), बी.टी. -10 एवं बी.टी.-18 संकर किस्मों में अर्का श्रेष्ठ एवं अर्का अभिजीत जीवाणु मुरझा रोग प्रतिरोधी किस्मों की पहचान की गई है। इससे उत्पादन कर लाभ उठाया जा सकता है। इसी प्रकार बैंगन की स्वर्ण श्री, स्वर्ण मणि, स्वर्ण प्रतिभा, स्वर्ण श्यामली, अर्का निधि, अर्का केशव या अर्का नीलकंठ, बी.बी.-7, बी.बी.-11 एवं बी.बी.-44 रोग प्रतिरोधी किस्में हैं।

झुलसा रोग :

क) अगेती अंगमारी : यह फफूंदजनित रोग है जो टमाटर एवं आलू फसलों में मुख्य रूप से होता है। इस रोग के आरंभिक लक्षणों में पत्तों तथा तनों पर काले भूरे रंग के 1-2 संकेन्द्रिय धब्बे बनना तथा रोग की उग्रता की स्थिति में अनगिनत धब्बे बनना है उग्रता की स्थिति में धब्बों का एक दूसरे से मिलकर झुलसा सदृश फैलना तथा पत्तियों का पीला पड़कर झड़ना पाया जाता है। इसके काले भूरे रंग के धब्बे फलों पर भी दिखाई पड़ते हैं जिससे काफी नुकसान होता है।

ख) पिछेती अंगमारी : यह फफूंद जनित रोग है जो टमाटर एवं आलू फसलों में मुख्य रूप से लगता है। इस रोग के लक्षण में पत्तों के किनारों से काले रंग के जलसिक्त धब्बे पाये जाते हैं जिससे पत्ता झुलस जाता है तनों एवं कच्चे फलों पर जलसिक्त धब्बे पाये जाते हैं जिनसे बरसात के मौसम में सड़न प्रारंभ होती है तथा काफी नुकसान होता है।

ग) फोमोप्सिस झुलसा : यह बैंगन का मुख्य फफूंदजनित रोग है। यह रोग ग्रस्त बीजों से फैलता है। इसमें नर्सरी में पत्तों पर काले रंग के धब्बे पाये जाते हैं। तने और पत्तों पर मटमैले भूरे गोलाकार, धंसे धब्बे पाये जाते हैं तथा पत्तों का पीला पड़ना पाया जाता है। फलों पर धब्बा सड़न पैदा करता है जिसमें सड़े एवं सूखे भागों पर पिननुमा अनेकों आकृतियाँ दिखती हैं। बैंगन की बीज उत्पादन के फसल के लिए यह विशेषरूप से क्षतिकारक बीमारी है।

एन्थ्रेक्नोज या काला सूखा रोग :

यह फफूंदजनित रोग है जो मिर्च, टमाटर, बैंगन, कद्दू एवं दाल कुल की सब्जियों में पाया जाता है। इनके भूरे काले रंग के धब्बे पत्तों तथा फलों पर पाये जाते हैं तथा पत्तियों का झड़ना एवं फलों का आकार बिगड़ना इनके मुख्य लक्षण हैं।

स्क्लेरोटीनिया सड़न :

यह फफूंदजनित रोग है जिसके कारण पौधों में जड़ सड़न, पादगलन, तना सड़न तथा फल सड़न के अलग-अलग लक्षण दिखाई देते हैं। बैंगन आदि में तना सड़न, सेम कुल एवं गोभी कुल, के पौधों में फलियों की सड़न प्रमुख हैं। अधिक नम मौसम में यह रोग तेजी से फैलता है। रोगग्रसित भाग पर सफेद भूरे फफूंद की कपासनुमा उपस्थिति के बीच काले भूरे सरसोंनुमा अनेकों स्क्लेरोशिया का होना इस रोग का विशेष लक्षण है।

श्याम (काला) विगलन :

यह फूलगोभी का जीवाणुजनित मुख्य रोग है जो बोरन तत्व की कमी की अवस्था में होता है। इसमें पत्तों के किनारों से V के आकार में पीला पड़ना, सूखना तथा शिराओं का काला पड़ना मुख्य लक्षण हैं तथा उग्रता की अवस्था में पत्तों का आंशिक या पूर्णरूप से सूखना एवं गोभी पर काले भूरे धब्बे दिखाई देना तथा सड़न की गंध होना मुख्य लक्षण हैं।

पीतशिरा मोजैक वाइरस :

यह भिण्डी का मुख्य विषाणुजनित रोग है यह सफेद मक्खी से फैलता है। इसमें पत्तियों की शिरायें चमकीली एवं पीली हो जाती है तथा उग्रता की अवस्था में पूरी पत्तियाँ एवं फल पीले पड़ जाते हैं। पत्तियों के आकार छोटे पड़ने लगते हैं तथा पैदावार घट जाती है।

रोग प्रतिरोधी किस्में : अर्का अनामिका, अर्का अभय, परवनी क्रांति, वी.आर,ओ.-5 तथा वी.आर.ओ.-6 प्रतिरोधी किस्में पायी गई हैं।

मोजैक :

यह सेम वर्गीय एवं सोलनेसी परिवार का मुख्य विषाणुजनित रोग है और लाही से फैलता है। इसमें पत्तियों का सिकुड़ना, शिराओं का चमकीला पीला पड़ना तथा फलियों में विसंगतियाँ पैदा होना इनके मुख्य लक्षण हैं।

लीफ कर्ल या पत्र कुंचन

यह सोलनेसी परिवार टमाटर, आलू, मिर्च, तम्बाकू तथा सेम वर्गीय परिवार का मुख्य विषाणुजनित रोग है इसमें पत्तियों का सिकुड़ना, पौधों का बौना होना तथा पत्तियों का मोटा होना इसके मुख्य लक्षण हैं। यह सफेद मक्खी से फैलता है।

बैक्टीरियल साफ्ट रॉट या जीवाणुज गीला सड़न :

यह मुख्य जीवाणुजनित रोग है जो बैंगन, मिर्च, प्याज, आलू, पातगोभी, फूलगोभी, कद्दू कुल की सब्जियों में लगता है। यह रोग गुदेदार जड़ों तथा तनों को विशेष रूप से आक्रान्त करता है। यह प्रायः भंडार की सभी तरह की सब्जियों एवं फलों में मिलता है किन्तु घाव या चोट लगे, कटे-फटे फलों पर विशेष रूप से लगता है। पहले जलीय छोटे धब्बे बनते हैं ये जल्दी ही बड़े हो जाते हैं। इस प्रकार थोड़े ही समय में ग्रसित भाग सड़ जाता है। जड़ वाली फसलों जैसे गाजर, शलजम, आदि की खेती में रोग लगने पर ऊपर की पत्तियाँ पीली पड़ने पर सूख जाती हैं तथा उकठा के लक्षण दिखाई देते हैं। टमाटर के पक रहे फल ग्रसित होने पर सड़कर गाढ़े रंग में बदल जाता है।

समेकित रोग प्रबंध के लिए सामान्य सुझाव

क) सौर ऊर्जा द्वारा मृदा उपचार :

तैयार किये हुए नर्सरी बेड को गर्मी के दिनों में 150-200 माइक्रोन मोटी पारदर्शी पॉलिथिन की चादर से 30 से 45 दिनों तक ढ़ककर सौरीकरण करें। इसके लिए 400 ग्राम करंज की खल्ली तथा 5 किलोग्राम गोबर की खाद प्रति वर्गमीटर की दर से मिलाकर गहरी सिंचाई दें तथा पूरी अवधि तक क्यारी में नमी संरक्षित रखें। बीज बुवाई से पहले चादर हटा लें, फिर लाईनों में पतली बुवाई करें।

ख) जैविक फफूंदीनाशक द्वारा बीज उपचार :

जैविक फफूंदीनाशक मुख्यतः ट्राईकोडर्मा विरिडी पर आधारित है। यह आलू, हल्दी, अदरक, प्याज, लहसुन, आदि फफूंदजनित फसलों के जड़ सड़न, तना गलन, झुलसा आदि रोगों में प्रभावकारी पाया गया है। साथ ही साथ टमाटर एवं बैंगन के जीवाणुज मुरझा रोग के लिए भी यह लाभप्रद पाया गया है। इसे फसल बोने के समय 2-4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से प्रयोग करना चाहिए। बाजार में यह विभिन्न नामों से उपलब्ध है जैसे संजीवनी, बायोडर्मा, ट्राईकोडर्मा या मोनिटर-डब्लू.पी (2.5 कि. प्रति हे.) एवं मोनिटर-एस (75 कि. प्रति हे.)।

ग) रसायनिक फफूंदनाशकों के द्वारा :

बेविस्टीन या कैप्टान (2 ग्राम दवा प्रति किलो बीज) से बीज उपचार करें तथा नर्सरी में ब्लूकॉपर-50 (3 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) या रिडोमिल एम.जेड (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) से पौध की ड्रचिंग करें।

तालिका 1 : सब्जियों के रोगजनक एवं रोकथाम के उपाय

रोग के नाम	रोगजनक	रोकथाम
1. डैम्पिंग ऑफ	पीथियम के स्पेपसीस या राइजोक्टोनिया के स्पेसीस	1. सौर ऊर्जा द्वारा भूमि का शोधन 2. जैविक फफूंदीनाशक का प्रयोग 3. बीजोपचार
2. पाउडरी मिल्ड्यु	लौकी कुल- स्यूडोपरनोस्पोरा क्यूबेंसिस मटर-सरीसाइफी पालीगोनाई	1. अगेती फसल लगायें। 2. नर्सरी में पौधे भूमि शोधन के उपरान्त बोयें 3. रोगग्रसित पौधा उखाड़ कर नष्ट कर दें। 4. बीज शोधित कर बोयें। 5. बेविस्टिन या कैराथेन का 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें
3. डाउनी मिल्ड्यु	पैरेनोस्पोरा पारासीटिका	1. जल निकासी का प्रबंध करें। 2. रोगग्रसित पुराने पत्तों को तोड़कर जला दें। 3. ब्लूकॉपर-50 या ब्लाईटाक्स के 0.3 प्रतिशत या डायथेन एम-45 (0.2%) या रिडोमिल एम.जेड (0.2%) घोल का छिड़काव करें।
4. मुरझा रोग	राल्सटोनिया सोलेनेशिरम	1. प्रतिरोधी किस्में लगायें। 2. फसल चक्र अपनायें। 3. करंज की खल्ली 10 क्वि. प्रति हे. के हिसाब से खेत तैयार करते समय अच्छी तरह मिलावें। 4. पौध को हिंग 1.0 ग्राम और हल्दी पाउडर 5 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी के घोल में आधा घंटा डुबोकर लगावें।

		5. जल निकासी की समुचित व्यवस्था करें।
5. झुलसा रोग क) अगेती अंगमारी	आल्टरनेरिया सोलनाई	1. दो-तीन वर्षीय फसल चक्र अपनायें। 2. रोगग्रसित पुराने पत्तों को तोड़कर जला दें। 3. बरसात के दिनों में टमाटर के पौधों में खूंटी का सहारा दें। 4. रोग के लक्षण प्रकट होते ही फफूंदीनाशी कवच 0.2 प्रतिशत या ब्लूकॉपर-50 या ब्लाईटाक्स के 0.3 प्रतिशत या डायथेन एम-45 के 0.20 प्रतिशत घोल का 10 दिनों के अन्तराल में तरल साबुन मिलाकर छिड़काव करें।
ख) पिछेती अंगमारी	फाइटोफथेरा इनफेसटेन्स	1. रोगग्रसित पुराने पत्तों को तोड़कर जला दें। 2. जाड़े के मौसम में समुचित सिंचाई करें। 3. बरसात के मौसम में पौधों को खूंटी का सहारा दें। 4. जल निकासी का समुचित प्रबंध करें। 5. फफूंदनाशी जैसे ब्लूकॉपर-50 या ब्लाईटॉक्स के 0.3%, रिडोमिल एम.-जेड. अथवा डायथेन एम-45 के 0.20% घोल का छिड़काव 7 से 10 दिनों के अन्तराल में तरल साबुन मिलाकर करें।
ग) फोमोप्सिस ब्लाईट	फोमोप्सिस वैक्ससेन्स	1. निम्न प्रकार से बीजोपचार करें : क) गर्म पानी (52° से.) से 30 मिनट तक या ख) जैविक फफूंदीनाशक से या ग) बेविस्टिन 2 ग्राम/किलो की दर से

		2. रोगग्रस्त पत्तियों एवं फलों को नष्ट करें 3. बेविस्टिन 0.1 प्रतिशत का 10 दिनों के अन्तराल में छिड़काव करें
6. एन्थ्रेक्नोज	कालेटोट्राइकम लिण्डेमुथियेनम एवं अन्य स्पेसीस	1. रोगग्रस्त पत्तियों एवं फलों को नष्ट करें। 2. रोग रोधी प्रजाति स्वस्थ बीज बोयें। 3. बीजोपचार फोमोप्सिस ब्लाईट की तरह करें। 4. बेविस्टिन 0.1 प्रतिशत या कवच के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
7. स्क्लेरोटीनिया	स्क्लेरोटीनिया स्पेसीस	1. फसल चक्र अपनायें। 2. जलनिकासी का प्रबंध करें। 3. डाईथेन एम-45 का 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
8. श्याम (काला) विगलन	बेरोन तत्व की कमी तथा जैन्थोमोनस कम्पेसट्रिस	1. गर्म पानी से बीजोपचार (52° से. पर 30 मिनट तक करें) 2. रोगग्रस्त पत्तियों एवं फलों को नष्ट करें। 3. रोपाई के 10 दिनों के बाद से बोरिक एसिड का 3 से 4 बार 25 ग्राम प्रति 20 लीटर पानी में घोल बनाकर तरल साबुन के साथ छिड़काव करें।
9. पीतशिरा मोजैक वाइरस	वाइ.बी.एम.भी	1. प्रतिरोधी किस्में लगायें। 2. आरंभ से रोगग्रस्त, पत्तियों एवं फलों को नष्ट करें। 3. कीटनाशी दवा जैसे नीम आधारित भेनगार्ड (4 मिली.) या रसायन आधारित डेमोक्रान या मोनोक्रोटोफास या नुवाक्रोन या मोनोसिल (1 मिली.) या रोगर (1.25 मिली.) प्रति लीटर पानी का 10 दिनों के अन्तराल में 3 छिड़काव करें।

10. मोजैक	पोटेटो वाइरस एक्स	पीतशिरा मोजैक वाइसर की तरह।
11. लीफ कर्ल या पत्र कुचंन	पोटेटो वाइरस एक्स सी.एम.वी.	पीतशिरा मोजैक वाइरस की तरह।
12. बैक्टीरियल साफ्टराट	इरविना कैरेटोवोरा तथा इरविनया की स्पेसीस	1. भंडार में कटे-फटे, रगड़े या चोट खाये फल न रखें। 2. भंडार गृह की दीवारों फर्श को फर्मालडिहाइड की (12 मिली. प्रति लीटर पानी) अथवा तूतिया (20 ग्राम प्रति लीटर पानी) के घोल से अच्छी तरह धो लें। 3. भंडार गृह का ताप 40° से. से कम रखें। 4. टमाटर की खड़ी फसल पर 0.25 प्रतिशत ताम्ब्र युक्त रसायन का छिड़ाकाव करें।

समेकित रोग प्रबंधन

समेकित रोग प्रबंधन का अभिप्राय है रोगों का प्रकोप न होने देना अथवा रोग के संक्रमण एवं उसकी उग्रता को कम करना। समेकित रोग प्रबंधन में विभिन्न फसलों में रोगाणुओं से होने वाले नुकासन को यथासंभव कम करना है। रोग जनकों को पूर्ण रूप से नष्ट करना न तो संभव है न इसकी आवश्यकता है। समेकित रोग प्रबंधन में वातावरण के प्रदूषण को रोकने पर विशेष ध्यान दिया जाता है। कवकनाशी, जीवाणुनाशी तथा रोग नियंत्रण में प्रयुक्त अन्य रसायनों का आवश्यकतानुसार एवं समुचित उपयोग हो इसके लिए रोगजनकों के जीवनचक्र एवं उससे होने वाले नुकसान की जानकारी आवश्यक है। जैविक विधियों द्वारा रोगों के प्रबंधन का महत्त्व काफी बढ़ा है। फसलों के कई मृदाजनित रोगों का प्रबंधन, ट्राइकोडर्मा, फफूँद की विभिन्न प्रजातियों *(ट्राइकोडर्मा विरिडी, ट्राइकाडर्मा हरजियानम, ट्राइकोडर्मा हेमेटन, ग्लायोक्लैडियम वायरेंग)* द्वारा किया जाता है। जैविक विधि में रोगजनकों के प्रबंधन के लिए कवकों, जीवाणुओं, एक्टिनोमाइसिज, वायरस, प्रोटोजोआ, सूत्रकृमि एवं माइट का भी प्रयोग किया जाता है।

समेकित रोग प्रबंधन के प्रमुख घटक हैं :-

1. स्वस्थ, रोगाणुमुक्त एवं उपचारित बीज का उपयोग, (2) खर-पतवार तथा विभिन्न रोगों के पोषी पौधों का नियंत्रण, (3) रोगग्रस्त मृदा में फसलचक्र अपनाना एवं सम्बंधित फसलों का 3-4 वर्षों के लिए परित्याग, (4) मृदाजनित रोगों के प्रबंधन के लिए प्रचुर मात्रा में जैविक खाद एवं जैविक विधियों का उपयोग, (5) अन्तर्वर्ती फसल, पल्वार (मल्चिंग) एवं अन्य विधियों द्वारा रोगाणुओं की वृद्धि की रोकथाम, (6) उर्वरकों, सिंचाई तथा रोग के प्रबंधन में प्रयुक्त रसायनों का समुचित उपयोग, (7) फसलों की उन्नत एवं रोगरोधी किस्मों का चयन एवं (8) अनुशंसाओं के अनुसार फसलों की उपयुक्त समय पर बोआई एवं कटाई।

प्रमुख खरीफ फसलों में समेकित रोग प्रबंधन

धान झारखण्ड राज्य की सबसे महत्त्वपूर्ण फसल है। इस राज्य की बहुसंख्यक आबादी का प्रमुख आहार चावल है तथा इसकी खेती अन्य फसलों की तुलना में व्यापक पैमाने पर की जाती है। मकई और मडुँआ की खेती भी इस राज्य में बड़े पैमाने पर की जाती है। दलहनी फसलों में अरहर, मूँग, उड़द, तेलहनी में मूंगफली, सब्जियों में भिंडी, बैंगन, कद्दू जाति की सब्जियाँ इस मौसम की अन्य प्रमुख फसल है।

खरीफ फसलों के रोग एवं उसके समेकित प्रबंधन की प्रमुख अनुशंसाएँ निम्नलिखित है :

तालिका-1 : खरीफ फसलों के रोग एवं उनका समेकित प्रबंधन

क्र.सं फसल एवं प्रमुख रोग	अनुशंसाएँ
1. भूरी चित्ती, ब्लास्ट या झुलसा, जीवाणुज पर्ण अंगमारी, पर्णच्छद अंगमारी (सीथ ब्लाइट) एवं फॉल्स स्मट	1. भूरी चित्ती एवं झुलसा रोगों के लिए बीज का बैविस्टीन या वीटाफैक्स फफूंदनाशक दवा (2 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा. बीज) अथवा बैविस्टीन-1 ग्राम + थीरम-1 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की बोआई से पूर्व सूखा उपचार करें। 2. जीवाणुज पर्ण अंगमारी रोग के लिए बीज को स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के घोल (2 ग्रा. मात्रा 10 लीटर पानी में) पूरी रात भिंगोकर उपचारित करें। 3. खड़ी फसल में भूरी चित्ती तथा झुलसा रोगों की रोकथाम के लिए हिनोसान (0.1%) कवच (0.2%) अथवा बीम (0.05%) का छिड़काव करें। 4. पर्णच्छेद अंगमारी की रोकथाम कोनटाफ (0.1%) के छिड़काव से की जा सकती है। फॉल्स स्मट रोग के प्रकोप से बचाव के लिए टिल्ट (0.1%) अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2%) का छिड़काव बालियाँ निकलने से पूर्व करें। नेत्रजन उर्वरक का उपयोग अनुशंसाओं के अनुसार ही करें।
2. मकई (हेल्मिंथो-स्पोरियम झुलसा, सीथ ब्लाइट एवं किट्ट रोग)	1. बोआई से पूर्व बीज का थीरम फफुंदनाशक (3 ग्रा. मात्रा प्रति किलोग्राम बीज) से सूखा उपचार करें। हेल्मिंथोस्पोरियम झुलसा एवं किट्ट रोगों के प्रारंभिक लक्षण प्रकट होने पर इंडोफिल एम-45 (0.25%) का छिड़काव करें। सीथ ब्लाइट रोग की रोकथाम के लिए कोनटाफ (0.1%) का छिड़काव करें।
3. मडुआ (ब्लास्ट या झुलसा रोग)	1. झुलसा रोग की रोकथाम के लिए 50% बालियाँ आने के पश्चात् बीम (0.05%) हिनोसान (0.1%) का एक छिड़काव अथवा साफ (0.2%) का दो छिड़काव करें।

क्र.सं फसल एवं प्रमुख रोग	अनुशंसाएँ
4. अरहर (म्लानि रोग)	1. बोआई से पूर्व बीज का बैविस्टीन फफूंदनाशक (2 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज) से सूखा उपचार करें। बीजोपचार ट्राइकोडर्मा आधारित जैविक फफूंदनाशी (4 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज) से भी की जा सकती है। 2. अरहर की रोग सहिष्णु किस्मों (जैसे बसंत, बहार, शरद, बिरसा अरहर-1) का चयन करें। 3. प्रारंभिक अवस्था में म्लानि रोग से बचाव के लिए बैविस्टीन (0.05%) का छिड़काव करें। छिड़काव इस प्रकार करें ताकि पौधों के साथ जड़ के पास की मिट्टी भी सिंचित हो जाये। 4. अरहर-ज्वार की मिलवाँ/अन्तर्वती फसल म्लानि रोग के प्रसार को रोकने में सहायक होता है। अरहर का फसलचक्र तम्बाकू के साथ किया जाये तो रोग में कमी हो जाती है।
5. मूंग, उड़द (पत्र लांक्षण ऐन्थ्रेक्नोज, वायरस रोग, जालीदार अंगमारी रोग)	1. रोगग्रस्त फसल से प्राप्त बीज का उपयोग न करें। 2. बोआई से पूर्व बीज का बैविस्टीन फफूंदनाशक (2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से सूखा उपचार करें। 3. वायरस रोगों का कीटों से प्रसार रोकने के लिए सर्वांगी कीटनाशी मेटासिस्टॉक्स (1 मिली लीटर प्रतिलीटर पानी में) का छिड़काव करें। 4. पत्र लांक्षण एवं जालीदार अंगमारी रोगों की रोकथाम के लिए बैविस्टीन (0.05%)/इंडोफिल एम -45 (0.2%) का छिड़काव करें।
6. मूंगफली (टिक्का रोग)	1. बोआई से पूर्व बैविस्टीन (2 ग्राम)/थीरम (3 ग्राम) से प्रति किलोग्राम बीज का सूखा उपचार करें। 2. खड़ी फसल में रोग के प्रारंभिक लक्षण प्रकट होने पर बैविस्टीन (0.075%) + इंडोफिल एम-45 (0.15%) का छिड़काव करें।

क्र.सं फसल एवं प्रमुख रोग	अनुशंसाएँ
7. भिंडी (पीला शिरा मोजैक वायरस रोग, पत्र लांक्षण चूर्णी फफूँद रोग)	1. उन्नत एवं रोग सहिष्णु किस्मों (जैसे परभनी क्रांति, पंजाब-7, अर्का अभय, अर्का अनामिका, पूसा ए-4) का चयन करें। 2. बोआई से पूर्व बीज का बैविस्टीन 2 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज की दर से सूखा उपचार करें। 3. कूड़ों में दानेदार सर्वांगी कीटनाशी (कार्बोफुरॉन-3 जी) 3 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से करें। 4. पत्र लांक्षण एवं चूर्णीफफूंद रोगों के प्रारंभिक लक्षण प्रकट होने पर बैविस्टीन (0.1%) का एक छिड़काव करें।
8. बैंगन (म्लानि रोग)	1. बैंगन की रोग सहिष्णु किस्मों (जैसे स्वर्णश्री, स्वर्णमणि, अर्का केशव, अर्का निधि) का चयन करें। 2. गर्मियों में गहरी जुताई कर खेत को खुला छोड़ दें। 3. फसलचक्र में 3 वर्षों तक सोलेनेसी कुल की सब्जियाँ (आलू, बैंगन, टमाटर, मिर्च, शिमला मिर्च) नहीं लगायें। 4. खेत में प्रचुर मात्रा में गोबर की सड़ी खाद एवं खली का प्रयोग करें। 5. खेत में बिचड़ों को रोपने से पूर्व उनकी जड़ों को स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के घोल (2 ग्राम 10 लीटर पानी में) में 1 घंटे तक डुबोयें।

समेकित कीट प्रबंधन

अधिक उत्पादन बढ़ाने के लिए उन्नत किस्मों एवं आधुनिक तौर-तरीकों को अपनाया जा रहा है। खासकर झारखण्ड के किसान सब्जियों के उत्पादन में नई-नई किस्मों (हाइब्रिड) का उपयोग कर रहें हैं। वहीं दूसरी ओर रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का भी भरपूर व्यवहार किया जा रहा है। जिसके कारण अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो रही है। प्रमुख कीड़ों से विभिन्न फसलों में होने वाली हानि 10 से 12 प्रतिशत तक आंका गया है। कीटनाशकों के अन्धाधुंध प्रयोग से गंम्भीर वातावरणीय एवं अन्य जटिल समस्याएं बढ़ रही है। अन्धाधुंध कीटनाशी के प्रयोग से निम्नलिखित समस्याएं पैदा हो रही है :

1) पर्यावरण दूषित होना, (2) कीड़ो में रासायनिक कीटनाशी के प्रति प्रतिरोध क शक्ति पैदा होना, (3) लाभकारी कीड़ो एवं अन्य दूसरे जीवों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना, (4) खाद्य पदार्थो में रासायनिक कीटनाशी का अवशेष पाया जाना, (5) गौण कीटों का प्रमुख कीड़ो का रूप लेना।

जिन राज्यों में रासायनिक कीटनाशी का व्यवहार अन्धाधुंध होता है उनमें नयी प्रजातियों के हानिकारक कीट पाये जाते हैं।

रासायनिक कीटनाशकों के अन्धाधुंध प्रयोग से कीड़ों की उभरती हुई नयी समस्याएं

राज्य	खपत (प्रतिशत)	कीट
आन्ध्र प्रदेश	33.6	सफेद मक्खी, धान का भूरा फदका, गाँलमिंज
गुजरात	15.2	स्पाइडर माइट, मूंगफली का सर्पिल पत्ती सुरंगक
कर्नाटक	16.2	स्पाइडर माइट
पंजाब	11.4	स्पाइडर माइट
अन्य राज्य (झारखण्ड सहित)	18.5	स्पाइडर माइट, श्वेत मक्खी

इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि रासायनिक कीटनाशी के अन्धाधुंध प्रयोग से अनेक प्रकार की समस्याएं पैदा हो रही है। फलतः पर्यावरण का संतुलन बिगड़ता जा रहा है एवं किसानों को हानि उठाना पड़ रहा है। अतः टिकाऊ खेती के लिए ऐसी तकनीक की आवश्यकता है जिनसे पर्यावरण की सुरक्षा के साथ-साथ आर्थिक लाभ भी बना रहे। अतः इसके लिए समेकित कीट प्रंबन्धन ही ऐसी प्रणाली है जिसके तार्किक व्यवहार से पर्यावरण को क्षति पहुँचाएं बिना कीड़ों का प्रबन्धन कर आर्थिक लाभ को बनाए रखा जा सकता है।

अंगीकृत की जाने वाली उन्नत तकनीक

कृषि कार्यगत नियंत्रण :

इस पद्धति में किसानों द्वारा किये जाने वाले कृषि कार्यो जैसे खेतों की गहरी जुताई, खर-पतवार को नष्ट करना, खेतों में सड़ा हुआ गोबर, कम्पोस्ट एवं करंज की खल्ली का व्यवहार करना, अम्लीय मिट्टी में चूना का प्रयोग करना, समेकित उर्वरक का प्रयोग करना, स्वस्थ्य एवं उपचारित बीजों का व्यवहार करना, उचित सिंचाई का प्रबन्ध करना, फसलों की उचित समय पर बुआई एवं कटाई, अन्तः फसलों एवं फन्दा फसलों का उपयोग, फसल-चक्र अपनाना, चिड़ियां को बैठने के लिए आधार प्रदान करने से कीड़ो की संख्या को कम करने में मदद मिलती है। कीड़ो के जीवन वृतान्त, व्यवहार, आवास एंव पारिस्थितिकी की पूरी तरह से जानकारी होने से कीड़ो की संख्या को घटाने में मदद मिलती है। इन तरीको को अपनाने से लागत में किसी तरह से वृद्धि भी नहीं होती है। अतः किसानों को समेकित कीट प्रबन्धन से होने वाले लाभ के बारे में जानकारी देना बहुत जरूरी है।

जैविक नियंत्रण :

प्राकृतिक पारिस्थितिक प्रणाली में कीड़ों का नियंत्रण, उनके प्राकृतिक शत्रुओ के द्वारा स्वतः ही होते रहता है। किन्तु विकट परिस्थिति में कीड़ों की संख्या अधिक होने पर परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों की संख्या को भी बढ़ाना पड़ता है ताकि दुश्मन कीड़ों की संख्या को कम किया जा सके। इसलिए जैविक नियंत्रण कार्यक्रम में परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों के संरक्षण एवं संवर्द्धन को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। आजकल ट्राइकोग्रामा, क्राइसोपरला, लेडी बर्ड भृंग इत्यादि मित्र कीड़ों को प्रयोगशाला में पालकर इनकी संख्या को बढ़ाया जाता है एवं इनका प्रयोग दुश्मन कीड़ों के नियंत्रण में किया जाता है। इनके उपयोग के फलस्वरूप रासायनिक कीटनाशी के छिड़काव में कमी होती है फलतः लागत में भी कमी होती है एवं पर्यावरण को दूषित होने से बचाया जा सकता है। अतः कीट विशेषज्ञों की ऐसी कोशिश होनी चाहिए कि परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों की क्षमता विपरीत परिस्थितियों में भी बना रहे। परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों में रासायनिक कीटनाशी के प्रति प्रतिरोधी शक्ति का विकास करने की आवश्यकता है।

जैविक कीटनाशी का प्रयोग :

आजकल अनेक कम्पनियाँ जीवाणुओं, कवकों एवं विषाणुओं को मिश्रित कर कीटनाशी बना रहें है। इनके प्रयोग से कीड़ों में प्रतिरोधक क्षमता का विकास की सम्भावना नहीं रहती है। जैविक कीटनाशी कीटों की वृद्धि एवं विकास को प्रभावित

कर मार रहें हैं। आजकल *बावेरिया बासियाना, मेटरहिजयम एनिसोपलिया* (कवक कीटनाशी), हाल्ट, डेल्फिन, बायोलेप (बी.टी.), एन.पी.वी. हेलियोथिस तथा स्पोडोप्टेरा जैसे कीड़ों के नियंत्रण के लिए व्यवसायिक रूप से उपलब्ध है।

घरेलू कीटनाशक का प्रयोग :

घर में उपलब्ध संसाधनों का प्रयोगकर कीड़ों की संख्या को कम किया जा सकता है। इनके प्रयोग से लागत में कमी होती है एवं पर्यावरण में संतुलन बना रहता है।

(क) नीम की पत्तियों से कीटनाशक बनाना : एक बाल्टी को नीम की पत्तियों से भर देते हैं तथा उसको पानी में डुबोकर चार दिन के लिए छोड़ देते हैं। पाँचवा दिन नीम की पत्तियों को छाँट कर मिश्रण तैयार कर लेते हैं एवं घोल को छानकर थोड़ा सा साबुन का घोल मिलातें हैं उसके बाद छिड़काव किया जाता है। इसके कारण बहुत से कीड़ों की संख्या कम हो जाती है।

(ख) नीम के बीज से कीटनाशी बनाना : एक किलोग्राम नीम के बीज को धूल में परिवर्तित करते है। धूल को 20 लीटर पानी में मिलाकर रातभर फूलने के लिए छोड़ देते हैं। सुबह अच्छी तरह मिश्रित कर छान लेतें हैं। छानने के बाद घोल में 20 ग्राम साबुन का घोल मिलाकर फसलों पर छिड़काव करते हैं। नीम के बीज से निर्मित कीटनाशी अधिक प्रभावशाली होता है एवं अनेक प्रकार के कीड़ों के नियंत्रण में सक्षम होता है।

(ग) खैनी का डंटल से कीटनाशक बनाना : एक किलोग्राम खैनी का डंटल को चूर्ण बनाकर 10 लीटर पानी में मिलाकर गर्म करते हैं। आधा घंटा खौलने के बाद घोल को ठंडा होने के लिए नीचे उतार देते हैं। जब घोल का रंग लाल भूरा हो जाता है तब घोल को छानकर 20 ग्राम साबुन का घोल मिला देते हैं। इस घोल में 85 से 90 लीटर पानी मिलाकर फसलों पर छिड़काव करते हैं। इनके प्रभाव से लाही, मधुआ, श्वेतमक्खी, दहिया कीट इत्यादि को नियंत्रित किया जाता है।

(घ) हरा तीता मिर्चा एवं लहसुन से कीटनाशक बनाना : तीन किलोग्राम हरा तीता वाला मिर्चा लेते हैं। मिर्चा के डंटल को हटाकर पीसकर 10 लीटर पानी में डुबोकर रातभर छोड़ देते हैं। दूसरा बर्त्तन में आधा किलोग्राम लहसुन को कूंचकर 250 मि.ली. किरासन तेल में डुबोकर रातभर छोड़ देते हैं। सुबह में दोनो घोल को अच्छी तरह मिलाकर छान लेते हैं। एक लीटर पानी में 75 ग्राम साबुन का घोल बनाकर तीनों घोल को एक साथ मिला दिया जाता है। दो ढाई

घंटा स्थिर होने के बाद घोल को पूनः छान लेते हैं। इस घोल में 70 लीटर पानी मिलाने के बाद फसलों पर छिड़काव करना चाहिए। यह कीटनाशी गोभी के कीड़ों के अलावे अन्य फसलों में लगने वाले पिल्लु को भी नियंत्रित करता है।

(ड.) गोमूत्र से कीटनाशक बनाना : पाँच किलोग्राम गोबर, पाँच लीटर पानी एवं पाँच लीटर गोमूत्र को मिश्रित कर चार दिनों तक सड़नें के लिए छोड़ देते हैं। पाँचवां दिन घोल को अच्छी तरह से मिलाकर छान लेते हैं। छानने के बाद घोल में 100 ग्राम चूना मिलाते हैं। इस घोल में 67-68 लीटर पानी मिलाकर फसलों पर छिड़काव करना चाहिए। इसके प्रभाव से कीड़ें, फसलों पर अंडा नहीं दे पाती है। इस कीटनाशी के उपयोग से फसलों का रोग से बचाव होता है एवं फसलों का रंग हरा-भरा हो जाता हैं।

पौधों से बना कीटनाशी :

नीम से निर्मित कीटनाशी जैसे - अचूक, निम्बेसिडिन, निमेरिन, निमोल, बेनगार्ड का व्यवहार कीड़ों के नियंत्रण के लिए अच्छा पाया गया है।

कीटनाशक रसायनों का प्रयोग :

आवश्यकता होने पर ही सुरक्षित कीटनाशी का व्यवहार उचित समय एवं उचित मात्रा में करना चाहिए।

उन्नत तकनीक के अंगीकरण से लाभ

प्रचलित रासयनिक कीटनाशक नियंत्रण के मुकाबले समेकित कीट प्रबन्धन से निम्नलिखित लाभ देखे गए हैं:-

1. यह एक टिकाउ एवं प्रकृति में पाये जाने वाले संसाधनों पर आश्रित होने के कारण लाभदायक है।
2. यह पर्यावरण को शुद्ध करने में मददगार होता है।
3. मनुष्य एवं जानवरों के स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है।
4. कीड़ों में रसायन के प्रति प्रतिरोधक क्षमता को कम करने में सहायक होता है।
5. मित्र कीट एवं लाभदायक जीवों की संख्या में बढ़ोतरी होती है।
6. खाद्यानों एवं साग-सब्जियों में कीटनाशी के अवशेष की मात्रा नगण्य होता है।
7. रासायनिक कीटनाशी के छिड़काव में भारी कटौती होती है।

8. पर्यावरण में जीवों का संतुलन बना रहता है।
9. मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखता है।
7. अंगीकरण में समस्याएं और संभावनाएं
   (क) लाभकारी कीड़ों का पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होना।
   (ख) सुझाये गये आर्थिक हानि स्तर को देखने के लिए सरल तकनीकों का अभाव।
   (ग) किसानों को पूरी जानकारी का अभाव।
   (घ) प्रचार-प्रसार की समस्याएं।
   (ड.) कीटनाशी रसायन से मुक्त फल, सब्जी एवं खाद्यान्न का अधिक कीमत न मिलना।
   (च) सामाजिक आर्थिक समस्याएं।

समेकित कीट प्रबन्धन के अंगीकरण की सम्भावना अच्छी है। इसके लिए किसानों को शिक्षा की आवश्यकता है। सरकार को परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों के पालने के लिए जैव प्रयोगशाला के गठन की आवश्यकता है। इसको आगे बढ़ाने के लिए कृषि वैज्ञानिकों एवं कृषि पदाधिकारी एवं कर्मचारीगण की सहयोग की आवश्यकता है। उन्नत बीज, जैविक कीटनाशी, नीम से निर्मित बाजारू दवा की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता जरूरी है।

लाभ-मुल्य विश्लेषण

समेकित कीट प्रबन्धन के अंगीकरण से कपास की खेती में लाभ देखा गया है (तमिलनाडु)

अवयव	औसत	
	आई.पी.एम.क्षेत्र	साधारण क्षेत्र
1. रासायनिक कीटनाशी का छिड़काव	6.3	10.7
2. रासायनिक कीटनाशी की मात्रा (किलो ए. आई./हे.)	3.8	9.2
3. छिड़काव में अन्तर (दिन)	17.1	9.2
4. लाभकारी जीव (प्रति सैम्पल)	25.7	9.5

इस तालिका को देखने से पता चलता है कि उन क्षेत्रों में जहाँ समेकित कीट प्रबन्धन का काम चल रहा है, वहां साधारण की तुलना में यह अधिक लाभकारी है।

प्रमुख अनुशंसाएं :

समेकित कीट प्रबन्धन को सफल बनाने के लिए निम्न बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है :

1. गहरी जुताई करके खेतों को धूप दिखाना।
2. खर-पतवार को नष्ट करना।
3. संतुलित मात्रा में खाद का प्रयोग।
4. स्वस्थ्य बीज की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
5. बीजोपचार करना।
6. फसल-चक्र अपनाना।
7. कीड़ों से सुरक्षा के लिए घर में बनाये गए कीटनाशी का व्यवहार करना।
8. परजीवी एवं परभक्षी कीड़ों को बढ़ावा देना।
9. जैविक कीटनाशी का प्रयोग करना।
10. नीम से निर्मित बाजारू कीटनाशी का व्यवहार करना।
11. आवश्यकतानुसार उचित कीटनाशी का प्रयोग उचित समय एवं उचित मात्रा में करना।
12. फसलों को बराबर देख-रेख करते रहना।

उन्नतशील फार्म कार्य संयंत्र एवं उपकरण

जनसंख्या की वृद्धि के साथ-साथ अनाज के उत्पादन में भी वृद्धि होना आवश्यक है। उत्पादन बढ़ाने के दो ही उपाय हैं, या तो कृषि योग्य भूमि का रकबा बढ़ाय जाय या प्रति एकड़ उपज बढ़ाया जाय। कृषि योग्य भूमि का क्षेत्र बढ़ाने की संभावना बहुत कम हैं। इसलिए उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रति एकड़ उपज बढ़ाना ही एकमात्र उपाय है। कृषि निदेशालय एवं कृषि विश्वविद्यालय के विशेषज्ञ एवं वैज्ञानिक सतत् प्रयत्नशील है। अधिक उपज के लिए अच्छे बीज, समय पर बुआई, उचित पौधा संरक्षण, उचित पौष्टिक तत्व, अच्छे खेत के तैयारी एवं उचित दूरी में बुआई इत्यादि जरूरी है।

अच्छे खेत की तैयारी, समय पर बुआई, उचित पौधा संरक्षण, सामयिक खर-पतवार नियंत्रण, फसल कटाई एवं जुताई के लिए उन्नत कृषि यंत्रों की आवश्यकता है। झारखण्ड के पठारी क्षेत्रों की मिट्टी जलधारण क्षमता कम और जल्द ही भूमि के उपरी सतह की नमी में कमी आ जाती है। किसानों को खेती की तैयारी एवं बुआई के लिए बहुत कम समय मिलता है। उन्नत कृषि यंत्रों की कमी के कारण किसानों को बाध्य होकर बीज को नमी की उपस्थिति में जमीन पर छिड़क देना पड़ता है। इसमें किसानों को अधिक बीज भी लगाना पड़ता है, साथ-साथ अंकुरण भी कम एवं असमान होता है।

जुताई यंत्र

अविकसित जुताई यंत्र (देशी हल) से अच्छी तरह जमीन की तैयारी नहीं हो सकती है। जिसके कारण पौधे के जड़ों का विकास ठीक तरह से नहीं हो पाता है और पौधा पूर्ण स्वस्थ एवं विकसित नहीं हो पाता है। फलतः उपज में कमी हो जाती है। देशी हल के स्थान पर अगर किसान मिट्टी पलटने वाला हल (मोल्डबोर्ड हल) या बिरसा रीजर हल से करें तो अच्छी जुताई के साथ-साथ समय का भी बचत होता है। मोल्डबोर्ड हल से जुताई करने से 'L' आकार का कुड़ बनता है जिसमें एक ही जुताई में सम्पूर्ण खेत की जुताई हो जाती है। वहीं पर देशी हल से जुताई करने से 'V' आकार का कुड़ बनता है जिसमें सम्पूर्ण जुताई के लिए कम से कम तीन बार जुताई करनी पड़ती है। देशी हल से जुताई करने पर ढेला उठता है वहीं मिट्टी पलटने वाला हल से ढेला नहीं उठता है जिससे जमीन तैयारी करने में असानी होती है। मोल्ड बोर्ड हल बहुत आकार में उपलब्ध है। पशु चालित मोल्ड बोंड हल 15 एवं 20 से.मी. में उपलब्ध है पर यह हल यहाँ के स्थानीय पशु खींचने में समर्थ नहीं है इसलिए बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के कृषि अभियंताओं ने यहाँ के बैलों की शक्ति का आकलन

कर 10 से.मी. का हल बनाया जिसे यहाँ के स्थानीय बैल आसानी से खींच लेते हैं। इस हल से दिन भर में 0.16 हेक्टेयर की जुताई की जा सकती है। अगर किसान ट्रेक्टर द्वारा जुताई करें और 40 सेमी. आकार का हल वाला बटम प्रयोग करें तो दिन भर में 7 से 8 हेक्टेयर जुताई कर सकते हैं। जहाँ पर मिट्टी चिपचिपा हो, अधिक कड़ी हो या कंकड़ील पथरीली हो वहाँ मोल्डबोंड हल से अच्छी जुताई नहीं हो सकती हैं, वैसे स्थान पर तवादार हल का उपयोग करना चाहिए। तवादार हल भारी होती है, इसलिए बैलों द्वारा चलाना संभव नहीं है। यह ट्रैक्टर चालित हल है।

प्रथम जुताई मिट्टी पलटनें वाले हल से करने के बाद खेत की पूर्ण तैयारी के लिए पशुचालित बिरसा रीजर हल या पाँच फारा या तीन फारा कल्टीवेटर से करें। कल्टीवेटर जिस किसान के पास है वे कड़े कल्टीवेटर या तवादार हैरों द्वारा खेत की तैयारी करें। तवादार हैरो खरपतवार को काटकर छोटा कर देता है और खेत में मिला देता है।

खेत को बुआई के लिए समतल करना जरूरी है इसके लिए उन्नत पाटा का उपयोग करना चाहिए। यह पाटा बैल चालित एवं ट्रैक्टर चालित दोनों में उपलब्ध है। पाटा चला देने से ढेला टूट जाता है एवं बचा हुआ खर-पतवार भी बाहर निकल जाता है।

बुआई यंत्र

झारखण्ड के किसान इस वैज्ञानिक युग में भी पुरानें औजारों का ही उपयोग मुख्यतः धान, गेहूँ या अन्य फसलों की बुआई के लिए कर रहे हैं। इसका मुख्य कारण उन्नत बुआई यंत्रों एवं उनसे फायदे के बारे में किसानों को सही जानकारी नहीं मिल पाना है।

बुआई यंत्र उपयोग न कर किसान बीज को तैयार खेत के ऊपर छिड़क देते हैं। जिसके कारण सभी बीज को उचित नमी नहीं मिल पाता है और अंकुरण नहीं हो पाता है साथ ही साथ पौधे असमान दूरी पर उगते हैं जिससे सभी पौधों को एक समान जमीन से पोषक तत्व नहीं मिल पाता है। छिड़काव विधि से बुआई किए हुए फसल में खर-पतवार नियंत्रण करना कठिन है, क्योंकि कोई भी निकाई-गुड़ाई यंत्र उपयोग नहीं किया जा सकता है।

बाजार में पशुचालित एवं ट्रैक्टर चालित बुआई एवं यंत्र उपलब्ध है। किसान आवश्यकतानुसार किसी भी यंत्र का उपयोग कर सकते हैं। बिरसा कृषि विश्वविद्यालय ने पशु चालित बुआई यंत्र विकसित किया है जिसे ''बिरसा बीज-सह-खाद ड्रिल'' के नाम से जाना जाता है। इस यंत्र से कई प्रकार के फसलों की बुआई की जाती है। जैसे धान, गेहूँ, राई, सरसों, तीसी, सरगुजा, मूंग, उड़द, चना, मसूर, कुसुम इत्यादि।

इसके द्वारा बोआई के समय पाउडर अथवा दानेदार रासायनिक खाद बीज के बगल में 3 से.मी. हटकर तथा 3 से.मी. नीचे पट्आी में गिराया जाता है। इसके मुख्य भाग हैं (1) कुड़ खोलने का भाग, (2) बीज नियंत्रक प्रणाली, (3) सीड प्लेट, (4) बीज नली, (5) खाद नियंत्रक संयत्र एवं (6) हरीस।

बुआई के समय यह ध्यान रहे कि पहिया बराबर जमीन से लगा रहे नहीं तो बीज का गिरना रुक जायेगा। हाँ अंतर लेते समय जब बीज गिराना न चाहे तो मशीन को बाँयी ओर झुका कर पहिए को उठा सकते हैं जिससे उसका चलना रुक जाता है।

इस यंत्र से औसतन प्रतिदिन 0.2 हेक्टेयर जमीन की बुआई की जा सकती है तथा खर्च 500 से 600 रुपये प्रति हेक्टेयर पड़ता है। इसको छोटे बैल भी आसानी से खींच सकते हैं। किसान अधिक जानकारी एवं खरीदने के लिए कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, कांके, राँची से प्राप्त कर सकते हैं।

इस बुआई यंत्र के अलावा डीप फरों सीडर, ड्राईलैंड सीडर, मल्टीरो सीडर उपलब्ध है। उपलब्धता के अनुसार कोई भी बुआई यंत्र किसान खरीद कर उपयोग कर सकते हैं। ट्रैक्टर चालित बुआई यंत्र बाजार में उपलब्ध है पर यंत्र खरीदते समय यह ध्यान रखें कि बुआई यंत्र उसी मेक का हो जिस मेक का ट्रैक्टर है।

निकाई गुड़ाई यंत्र

यह यंत्र मानव चालित, पशु चालित या ट्रैक्टर चालित होते हैं। चाहे यह यंत्र मानव, पशु या ट्रैक्टर द्वारा चलाये जायें पर इन यंत्रों के मुख्य दो भाग होते हैं। एक मिट्टी के अन्दर काम करता है जिसे फाल कहते हैं, दूसरा वह भाग जिससे फाल जुड़ा होता है जिसे जत्था कहते हैं।

परम्परागत मानव चालित यंत्र में खुरपी, कुदाल, फावड़ा प्रमुख हैं। उन्नत यंत्रों में डच हो, ग्रबर, ड्राईलैंड वीडर, पहियादार व्हील हो प्रमुख है। निकाई-गुड़ाई का कार्य अगर खुरपी से किया जाता है तो एक हेक्टेयर निकाई के लिए 50 मजूदर की आवश्यकता होगी, वहीं अगर डच हो से किया जाता है तो 15 मजदूर एवं ग्रबर 10 से 12 मजदूर प्रति हेक्टेयर लगाना पड़ता है।

पशु चालित यंत्र में कल्टीवेटर एवं ब्लेडो हैरो प्रमुख है। बिहार कल्टीवेटर पाँच फारा यंत्र, पिछले दोनों फारों को खोलकर यह तीन फार वाला कल्टीवेटर बन जाता है। गन्ने की खेती में पाँच फार वाला यंत्र बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। अन्य फसलों के लिए तीन फारा कल्टीवेटर ज्यादा इस्तेमाल होता है। पाँच फारा वाला कल्टीवेटर से दिनभर में 0.8 से 1.0 एकड़ तथा 3 फार वाले कल्टीवेटर से 0.4 से 0.6 एकड़ तक जमीन की निकाई-गुड़ाई की जा सकती है।

ब्लेड हैरो या बखर भी खरपतवार नियंत्रण के लिए प्रमुख यंत्र है। जब खेत में फसल न हो तो गर्मी या अन्य मौसम में इस यंत्र को चलाने से खर-पतवार कट जाते हैं या उखड़ जाते हैं जो कड़ी धूप में सूखकर नष्ट हो जाते हैं। इस यंत्र से दिनभर में 0.5 से 1.0 एकड़ तक की निकाई-गुड़ाई की जा सकती है।

निकाई-गुड़ाई के लिए ट्रैक्टर चालित यंत्र 7 से 15 सोवेल वाला कल्टीवेटर उपयोग में लाया जाता है। इन यंत्रों से एक घंटे में लगभग 1.0 से 1.5 एकड़ जमीन की निकाई-गुड़ाई की जा सकती है।

रोपा धान, जिसकी रोपाई पंक्ति में हुई है, में निकाई-गुड़ाई के लिए जापानी पैडी वीडर एवं कोनो पैडी वीडर उपयोग में लाए जाते हैं। जापानी पैडी वीडर 15 से.मी. एवं 25 से.मी. के दो साईजों में उपलब्ध हैं। कोनो वीडर अभी सिर्फ 15 से.मी. साईजों में उपलब्ध है। इन यंत्रों को एक आदमी खड़ा होकर कतारों में आगे पीछे करके चलाया जाता है ताकि मिट्टी और पानी एक दूसरे से मिल जाए तथा घास एवं खर पतवार नष्ट हो जाय। इस यंत्र से एक आदमी दिनभर में लगभग 0.2 एकड़ जमीन की निकाई-गुड़ाई कर लेता है।

फसल कटाई यंत्र

भारत में आज भी फसल की कटाई के लिए अधिकांश खेतों पर हँसिए का उपयोग किया जाता है। देशी हँसिये के स्थान पर उन्नत हँसिया (वैभव एवं नवीन) का उपयोग करना चाहिए। देशी हँसिया से जहाँ एक मजदूर से केवल एक डिसमिल प्रति घंटा की कटाई की जाती है वहीं वैभव या नवीन हँसिया से करीब 2.5 डिसमिल प्रति घंटा फसल की कटाई की जा सकती है।

अब फसल कटाई के लिए छोटा मशीन उपलब्ध है। जिसे सेल्फ प्रोपेल्ड भरटीकल कानवेयर रीपर कहते हैं। यह यंत्र यहाँ के किसानों के लिए उपयोगी हैं क्योंकि इसे छोटे-छोटे खेतों में भी चलाया जा सकता है। इसे 3 या 5 अश्व शक्ति के इंजन के द्वारा चलाया जाता है। इंजन डीजल या किरासन तेल से चलाया जाता है। इंजन का उपयोग कटरबार को चलाने के लिए किया जाता है। कटरबार की लम्बाई 1.0 मीटर से 1.2 मीटर होती है। इस मशीन से एक घंटा में 0.275 हेक्टेयर धान एवं 0.2 हेक्टेयर गेहूँ की कटाई की जाती है। रीपर से फसल कटाई का खर्च देशी हँसिया की तुलना में 12-13 गुना कम है। इसकी कीमत लगभग 54,000 रु. है। लेकिन भाड़े पर किसान इससे कटाई कर सकते हैं। इस मशीन से कटाई के दौरान इससे दाना नहीं झड़ता है। इंजन में तेल की खपत लगभग एक लीटर प्रति घंटा है।

गहाई (दौनी) यंत्र

भारतवर्ष में फसलों की गहाई (दौनी) मुख्यतः मानव द्वारा या बैलों द्वारा रौंदकर की जाती है। इस विधि में तकनीकी जानकारी की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

पशु चालित ओल पाड दौनी मशीन उपलब्ध है। यह एक लोहे की मशीन है जिसमें बीस तवे तीन पंक्तियों में लगे होते हैं। इस मशीन को एक जोड़ी बैल से खींचा जाता है। इस मशीन से 16 घटों में लगभग 5 से 6 क्विंटल दाना एवं 12 क्विंटल भूसा निकाला जा सकता है।

सूखे फसल को पशुओं के स्थान पर ट्रैक्टर द्वारा रौंदकर भी दौनी की जाती है। इस विधि से करीब 150 से 200 किलो प्रति घंटा दौनी कर दाना अलग किया जाता है।

दौनी यंत्र

हमारे देश में अधिकतर किसान के पास पूँजी एवं तकनीकी जानकारी की कमी है। फिर भी शक्ति चालित मशीन का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। दाने को फसल से अलग करने के अलावा कई दौनी मशीन से सफाई करने, छटाई (ग्रेडिंग) करने तथा बोरे में भरने का प्रावधान भी होता है।

दौनी मशीन में सूखे फसल को हाथ से फीडिंग इकाई में डाला जाता है। वहाँ से स्वतः थ्रेसिंग इकाई में चला जाता है। थ्रेसिंग इकाई में दांतदार, हैमरमील टाइप, रास्पबर टाइप इत्यादि में किसी एक टाइप का सिलिंडर लगा होता है जिसके घूमने से फसल से दाना अलग हो जाता है तथा दाना और भूसा का मिश्रण को दोलन छलनी के ऊपरी सतह पर गिरते समय हवा का झोंका प्रवाहित किया जाता है। जिससे दाना और भूसा अलग हो जाता है। दानों को छोड़कर चूशक (एस्पिरेटर) या पंखा भूसे, तिनके आदि को चूसकर या उड़ाकर मशीन से बाहर फेंक देता है। साफ दाने तो दूसरे छलनी पर गिर जाते हैं तथा दौनी नहीं हो पाये दानों के अंश बड़े आकार के भूसे समेत ऊपरी छलनी के ऊपर से जमीन पर गिर जाते हैं। कुछ थ्रेसर में ठीक से दौनी नहीं हुए दानों आदि को पुनः सिलिंडर में भेजने की व्यवस्था होती है। दूसरी छलनी से दानों को धूल तथा छोटे-छोटे कणों एवं खरपतवार को बीजों से अलग करके जमीन पर गिरा दिया जाता है। कुछ थ्रेसरों में छलनी से आये हुए साफ दानों को उठाकर बोरियों में भरने का भी प्रावधान होता है। इस मशीन द्वारा एक घंटा में करीब 200 से 250 किलो दाना दौनी किया जाता है।

किसान को अभी भी केवल कीमत को ध्यान में रखकर सस्ते कीमत की निम्नकोटि का कोई भी यंत्र नहीं खरीदना चाहिए क्योंकि अन्ततः ऐसी मशीन प्रचलन में महंगी पड़ती है।

झारखण्ड में मछली पालन की समस्याऐं और संभावनाऐं

झारखण्ड में काफी पुराने तथा नये जलक्षेत्र है जो मुख्यतः वर्षा आधारित है। इन जलक्षेत्रों का निर्माण सिंचाई के लिए किया गया था ताकि किसान अपने खेतों से दो-तीन फसल ले सकें। अब सभी ने महसूस किया है कि जब तक वर्षा जल को संचित नहीं किया जाएगा तब तक कृषि और इनसे जुड़े अन्य कार्यक्रमों का विकास इस राज्य में संभव नहीं है। इसलिए सरकारी तथा गैर-सरकारी संस्थान किसानों को अधिक से अधिक तालाब/पोखर बनाने को प्रोत्साहन दे रही है। आज लगभग 29,000 हे. जलक्षेत्र इस राज्य में उपलब्ध है और लगभग 0.2 प्रतिशत की दर से इसमें वृद्धि हो रही है।

इन सभी जलक्षेत्रों में मछली पालन की असीम संभावनाऐं है तथा इनका उपयोग मछली पालन के रूप में कुछ जागरुक किसान कर भी रहे हैं। लेकिन यह कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित है। बाकी जगहों पर किसान इसे महत्त्व नहीं देते हैं जिसके अनेक कारण हैं। जिसमें भौगोलिक एवं तकनीकी कारण है, जिसके फलस्वरूप उन्हें मछली उत्पादन 300-500 किलोग्राम/वर्ष/हे. ही मिल पाता है जबकि हमारे पड़ोसी राज्य आन्ध्रप्रदेश में कुछ किसान 14 टन/वर्ष/हे. का उत्पादन ले रहे हैं तथा देश का औसत उत्पादन भी 1200 किलोग्राम/वर्ष/हे. के लगभग है। ऐसी स्थिति में झारखण्ड राज्य में मछली पालन की काफी संभावनाऐं है। जिससे किसान को सालों भर रोजगार एवं आमदनी में वृद्धि होगी। लेकिन संभावनाओं पर चर्चा करने से पूर्व इनकी समस्याओं पर ध्यान देना आवश्यक है।

1 तालाब की मिट्टी अम्लीय है : यह सही है कि मिट्टी अम्लीय होने पर भी तालाब का पानी अम्लीय नहीं होता। लेकिन तालाब में दी जाने वाली जैविक खाद का पानी में उपलब्धता उतनी नहीं हो पाती है, जिससे मछली का प्राकृतिक भोजन कम तैयार होता है।

2. तालाब मौसमी है : वर्षा आधारित होने के कारण अधिकांश तालाब मौसमी एवं दीर्घ मौसमी है। जिससे मछलियों को बढ़ने के लिए अधिक समय नहीं मिल पाता है।

3. शुद्ध एवं सही किस्म के मत्स्य बीज का अभाव : मछली पालन के लिए आवश्यक है कि शुद्ध एवं सही किस्म के मछली का बीज (जीरा) प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो। यह सही है कि विगत कुछ वर्षों में काफी हैचरी का निर्माण सरकारी एवं गैर-सरकारी विभागों में हुई है लेकिन अभी भी हम अपने 50-60 प्रतिशत आवश्यकताओं के लिए दूसरे राज्य पर निर्भर है।

4. जैविक खाद की कमी : इस राज्य में 80-90 प्रतिशत छोटे और मझौले वर्ग के किसान हैं। जिनके पास मवेशियों की संख्या काफी कम है तथा जैविक खाद की उपलब्धता भी कम है। इन जैविक खाद का उपयोग किसान पहले अपने खेतों में करते है तथा तालाब को प्राथमिकता अंत में दी जाती है।

5. पूँजी का आभाव : चूंकि मछली पालन में पूँजी की जरूरत तभी पड़ती है जब कृषि कार्य में पड़ती है। मछली पालन किसान के प्राथमिकता में नहीं है, जिसके कारण उसपर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता है।

6. जागरूकता में कमी : आप सब भी इस बात से सहमत होंगे कि यहाँ के किसान उतने जागरूक नहीं है जितने अन्य राज्यों के। इनकी आवश्यकताएं भी काफी कम है इसलिए मछली पालन के व्यवस्था में अधिक रुचि नहीं लेते हैं। साथ ही साथ भाषा एवं इनका अपने गाँव से बाहर न निकलना भी एक प्रमुख कारण है।

इन सभी समस्याओं के अलावे भी बहुत दूसरे कारण है, लेकिन विकास के काफी संभावनाऐं हैं। यदि आप गाँव में उपलब्ध जलक्षेत्रों को देखें तो पायेंगे जलक्षेत्र कि व्यक्तिगत/सामूहिक/मौसमी/दीर्घ-मौसमी/वार्षिक इत्यादि है। यहाँ के प्रत्येक गाँव में लगभग दो तालाब अवश्य हैं। एक व्यक्तिगत और दूसरा सामूहिक। व्यक्तिगत तालाब में तो किसान अपनी मर्जी के अनुसार काम कर सकते हैं तथा सामूहिक तालाब जो गाँववासियों के घरेलू काम में आते हैं, उसमें थोड़ी समस्या है। जिनके लिए उचित तकनीक का वर्णन निम्न तालिका द्वारा की जा रही है -

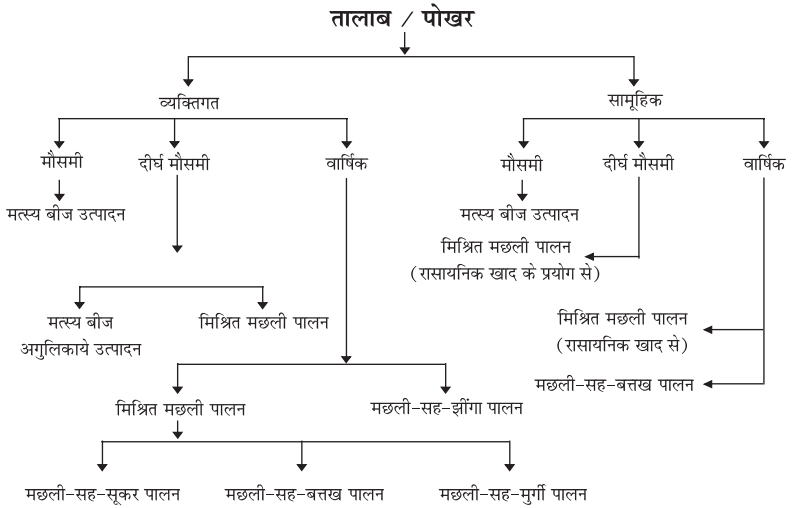

मत्स्य बीज उत्पादन :

इसके लिए वैसे तालाब जिसका क्षेत्रफल 25 से 50 डिसमिल हो और मौसमी हो सबसे उपयुक्त है। इस तकनीक में 3 दिन उम्र के मत्स्य बीज जिसे 'स्पॉन' कहते हैं तालाब में संचित की जाती है और 15-20 दिनों के बाद जब 1'' का हो जाता है तो तालाब वाले किसान को बेच दिया जाता है। यह काम बरसात के दिनों में किया जाता है, इसलिए मौसमी तालाब इसके लिए उपयुक्त है। ऐसा देखा गया है कि 20 डिसमिल वाले एक तालाब से 15-20 दिनों में एक किसान 1000 रुपये का शुद्ध लाभ कमा सकते हैं। बरसात के दिनों में यदि बाजार उपलब्ध हो तो 3-4 फसल आसानी से ली जा सकती है।

मत्स्य अगुलिकाओं का उत्पादन :

आजकल बड़े आकार के मत्स्य बीज जिसे ''अगुलिकायें'' कहते हैं तथा जिसका आकार 3-4'' होता है उसकी माँग बढ़ रही है। मत्स्य विभाग झारखण्ड सरकार भी जलाशय को संचित करने के लिए इसे उचित मूल्य पर खरीदती है। ये कार्यक्रम वैसे तालाब जिसमें 4-6 महीना पानी रहता है, उसमें किया जा सकता है।

दीर्घ मौसमी तालाब में मिश्रित मछली पालन :

दीर्घ मौसमी तालाब वैसे तालाब को कहते हैं, जिसमें 8-10 महीना पानी रहता है। इस तरह का तालाब यदि व्यक्तिगत हो तो मिश्रित मछली पालन (जिसमें 5-6 प्रकार की मछलियाँ एक साथ पाई जाती है) की जा सकती है। इसमें जैविक खाद, पूरक आहार एवं चूना की आवश्यकता होती है। ऐसा पाया गया है कि दीर्घ मौसमी तालाब में कॉमन कार्प एवं कतला के पालन करने से बढ़त अच्छी होती है।

कुछ तालाब सामुदायिक भी हो सकते हैं, जो गाँव वाले अपने घरेलू काम जैसे बरतन धोना, कपड़ा धोना इत्यादि काम में लाते हैं और वैसे तालाब में मछली पालन की अनुमति तो देते हैं लेकिन जैविक खाद की प्रयोग की मनाही करते हैं, ऐसे तालाब में घरेलू उपयोग के कारण तथा प्राकृतिक ढंग से अपने आप ही जैविक खाद आ जाता है। इसके अलावा रासायनिक खाद, डी.ए.पी. यूरिया इत्यादि का प्रयोग कर मछली का प्राकृतिक भोजन एवं मछली का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

सामुदायिक तालाब में मिश्रित मछली पालन :

इस तरह के तालाब में गाँव वाले घरेलू कार्य करते हैं जिससे मछली पालन के लिए जैविक खाद के प्रयोग की मनाही करते हैं। लेकिन उनके घरेलू कार्य करने से कुछ जैविक खाद अपने आप तालाब में आ जाता है। इस तरह के तालाब में मिश्रित मछली पालन किया जा सकता है। इसमें तालाब में जैविक खाद का प्रयोग न कर

रासायनिक खाद जैसे डी.ए.पी. यूरिया इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। इस तरह के तालाब में मछली-सह-बत्तख पालन भी किया जा सकता है।

व्यक्तिगत तालाब में समन्वित मछली पालन :

समन्वित मछली पालन वैसे विधि को कहते हैं जिसमें दो-तीन प्रकार के कार्यक्रम को एक साथ जोड़ा जाता है और एक दूसरे के बेकार पदार्थ का समुचित उपयोग किया जाता है। जैसे मछली-सह-बत्तख, मछली-सह-सूकर, मछली-सह-मुर्गी पालन इत्यादि।

मछली-सह-बत्तख पालन :

यह पालन विधि कुछ राज्यों में काफी लोकप्रिय है। इसमें तालाब में मिश्रित मछली पालन किया जाता है साथ ही साथ तालाब के बाँध पर या आसपास बत्तख पालन किया जाता है ताकि ये बत्तख तालाब में आसानी से जा सकें। दिनभर ये बत्तख तालाब से अपना प्राकृतिक भोजन लेती है और रात्रि में घर वापस आ जाती है। इस विधि में खाकी कैम्बल नामक बत्तख पालने की सलाह दी जाती है जिसकी अण्डा देने की क्षमता अधिक होती है और वर्ष में 250-300 अण्डे देती है। इन बत्तखों को दिन में भोजन देने की आवश्यकता नहीं होती है, लेकिन रात्रि में 80 ग्राम प्रति बत्तख के दर से किसान के घर में उपलब्ध भोज्य पदार्थ दिया जाता है। ऐसा देखा गया है कि किसान के परिस्थिति में यह बत्तख 180-200 अण्डे देती हैं जिसका वजन 40-70 ग्राम होता है। इस विधि से मछली उत्पादन लगभग 4500 किलाग्राम/हे./वर्ष होता है तथा एक रुपया के लागत पर लगभग 4-5 रुपया का आमद होता है। प्रति हेक्टेयर तालाब के लिए 500-600 बत्तख काफी होता है। इस विधि में कुछ समस्याऐं भी हैं -

- ये बत्तख अपने अण्डे को सेती नहीं है, जिससे चूजे तैयार नहीं होते। ऐसी सलाह दी जाती है कि प्रत्येक 2 वर्ष में बत्तख को बदल देनी चाहिए क्योंकि बत्तख के अण्डे देने की शक्ति कम हो जाती है।
- फसल लगाने के महीनों में इन बत्तखों को खेतों में नहीं जाने देना चाहिए क्योंकि कीटनाशक खाने से इनकी मौत हो जाती है।
- चूंकि ये ज्यादा अण्डा देने वाली प्रजाति है, इसलिए इन्हें पौष्टिक आहार देने से अण्डा उत्पादन अच्छा होता है।

मछली-सह-सूकर पालन :

ये विधि भी उपरोक्त विधि मछली-सह-बत्तख के तरह है। इसमें मछली एवं सूकर पालन किया जाता है सूकर पालन तालाब के बांध पर नजदीक ही किया जाता

है ताकि सूकर का मल-मूत्र नाली द्वारा सीधे तालाब में जाता है। ये मल-मूत्र कुछ मछलियों के लिए सीधे भोजन का काम करती हे तथा उनका प्राकृतिक भोजन के निर्माण में भी मदद करती है। सूकर का आवास व्यवस्था गाँव में उपलब्ध सामग्री से की जाती है तथा सूकरों को घर में उपलब्ध भोज्य पदार्थ ही दी जाती है जिसकी बढ़त भी अच्छी होती है। यह 6-8 माह में 40-70 किलोग्राम की हो जाती है। इस तरह एक वर्ष में किसान 2 बार सूकर पालन कर सकते हैं। इस विधि में भी लागत एक रुपया पर आमदनी 3-4 रुपये की होती है। इस विधि में 40-60 सूकर/हे. तालाब के दर से रखना चाहिए। इस पालन विधि में कॉमन कार्प नामक मछली की बढ़त दर अधिक पायी गयी है। सूकरों को 2-4 घंटा चरने के लिए खुला भी छोड़ा जा सकता है। इन्हे चरने के लिए तालाब के किनारे ही छोड़ना उपयुक्त होता है, जिससे उसका मल-मूत्र सीधे तालाब में चला जाता है।

मछली-सह-मुर्गी पालन :

इस विधि में मछली-सह-मुर्गी पालन एक साथ किया जाता है। इसमें भी मुर्गी का घर तालाब के ऊपर या बाँध पर बनाया जाता है ताकि उसका मल-मूत्र सीधे तालाब में जाय। इस विधि में भी मछलियों को अतिरिक्त खाद एवं पूरक आहार देने की आवश्यकता नहीं होती है। मुर्गी पालन 'दीप सीटर' व्यवस्था में भी की जा सकती है, जिसमें 'सीटर' की तालाब 25-50 किलोग्राम/हे./दिन सूरज निकलने से पूर्व तालाब में किया जा सकता है। इस विधि में भी 500-600 मुर्गी का खाद एक हेक्टेयर के लिए काफी होता है। इस विधि से मछली का उत्पादन 3000-4500 किलोग्राम/हे./वर्ष प्राप्त किया जा सकता है।

इन सभी प्रकार के तकनीक से किसान के पास उपलब्ध सभी प्रकार के जलक्षेत्रों का समुचित उपयोग हो सकता है।

(एन.ए.टी.पी - आई.टी.डी घटक)

समेति, झारखण्ड तथा कृषि एवं गन्ना विकास विभाग के सौजन्य से प्रकाशित

झारखण्ड सरकार

किसानोपयोगी प्रशिक्षण कार्यक्रमों के व्याख्यानों का संकलन

कृषि प्रसार के नवीनतम तकनीक

राज्य स्तरीय कृषि प्रबंधन, प्रसार एवं प्रशिक्षण संस्थान

(समेति, झारखण्ड)

कृषि भवन प्रांगण, कांके रोड, राँची - 834008

फोन : 0651-2232745, फैक्स : 0651-2232746

मार्च, 2005

© प्रकाशक द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य : 25/- रुपये मात्र

विषय-सूची

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	वर्षा आधारित खेती की उन्नत तकनीक – डॉ. ए. राफे	1–5
2.	अधिक उत्पादन हेतु उन्नतशील फसल प्रभेद – डॉ. जेड. ए. हैदर, डॉ. डी. एन. सिंह एवं मो. परवेज आलम	6–12
3.	झारखण्ड की मिट्टी में पोषक तत्वों की समस्या और समाधान – डॉ. ए. के. सरकार एवं डॉ. आर. पी. सिंह	13–17
4.	जीवाणु एवं जैविक खाद – डॉ. डी. के. शाही, डॉ. एन. के. राय एवं डॉ. ए. शर्मा	18–26
5.	सब्जी उत्पादन, भंडारण एवं मूल्यवर्द्धन की उन्नतशील तकनीक – डॉ. रणवीर सिंह	27–36
6.	औषधीय एवं सगंधीय पौधे – डॉ. बी. एम. चौधरी	37–44
7.	फल एवं सब्जियों के तुड़ाई उपरान्त उचित देखभाल एवं परिरक्षण के द्वारा मूल्यवर्द्धन – डॉ. एस. के. सिंह एवं डॉ. एस. कुमार	45–48
8.	सब्जियों में समेकित रोग प्रबंधन – डॉ. जयप्रकाश एवं डॉ. एस. कुमार	49–57
9.	समेकित रोग प्रबंधन – डॉ. एस. एम. प्रसाद	58–61
10.	समेकित कीट प्रबंधन – डॉ. देवेन्द्र प्रसाद	62–67
11.	उन्नतशील फार्म कार्य संयंत्र एवं उपकरण – डॉ. बी. एन. प्रसाद	68–72
12.	झारखण्ड में मछली पालन की समस्याऐं और संभावनाऐं – डॉ. ए. के. सिंह	73–77